BAMV(N)-202

संगीत शास्त्र

बी0ए0 संगीत(गायन) – चतुर्थ सेमेस्टर

संगीत विभाग – मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

BAMV(N)-202

संगीत शास्त्र

बी0ए0 संगीत(गायन) – चतुर्थ सेमेस्टर

संगीत विभाग – मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
तीनपानी बाईपास रोड, ट्रान्सपोर्ट नगर के पीछे,
हल्द्वानी – 263139
फोन नं0 : 05946–286000 / 01 / 02
फैक्स नं0 : 05946–264232,
टोल फ्री नं0 : 18001804025
ई–मेल : **info@uou.ac.in** वेबसाईट : **www.uou.ac.in**

अध्ययन मण्डल समिति

अध्यक्ष
कुलपति
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

संयोजक
निदेशक–मानविकी विद्याशाखा,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

प्रो0 पंकज माला शर्मा (सं)
पूर्व विभागाध्यक्ष संगीत विभाग
पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़।

डॉ0 विजय कृष्ण
पूर्व विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग,
डी0एस0बी0 कैम्पस, नैनीताल,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

डॉ0 मल्लिका बैनर्जी
संगीत विभाग,
इग्नू नई दिल्ली।

श्री प्रदीप कुमार
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 द्विजेश उपाध्याय
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 अशोक चन्द्र टम्टा
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0जगमोहन परगांई
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0जगमोहन परगांई
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम संयोजन, प्रूफ रिडिंग एवं फार्मेटिंग

श्री प्रदीप कुमार
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0द्विजेश उपाध्याय
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 अशोक चन्द्र टम्टा
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0जगमोहन परगांई
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 प्रकाश चन्द्र आर्या
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रुफ रीडिंग एवं फॉरमैटिंग

डॉ0 अशोक चन्द्र टम्टा
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 जगमोहन परगांई
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

इकाई लेखन

1.	डॉ0 मनीष डंगवाल	इकाई 1
2.	डॉ0 वन्दना जोशी	इकाई 2
3.	डॉ0 निर्मला जोशी	इकाई 3, 5, 6
4.	डॉ0 रेखा साह	इकाई 4
5.	डॉ0 प्रकाश चन्द्र आर्या	इकाई 7

कापीराइट : @उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
संस्करण : सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशन वर्ष : जुलाई 2025
प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल–263139
ई–मेल : books@uou.ac.in

इस सामग्री के किसी भी अंश को उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी, चक्रमुद्रण द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

बी0ए0 संगीत(गायन) – चतुर्थ सेमेस्टर
संगीत शास्त्र – बी0ए0एम0वी0(एन)–202

हिन्दुस्तानी संगीत सिद्धान्त– गायन एवं प्रयोगात्मक	पृष्ठ सं.
हिन्दुस्तानी संगीत सिद्धान्त–गायन	
इकाई 1 – भारतीय संगीत का इतिहास – प्राचीनकाल।	1–15
इकाई 2 – नाद, ग्राम, मूर्च्छना, जाति गायन, निबद्ध गान, अनिबद्ध गान, शुद्ध राग, छायालगराग, संकीर्ण राग, पूर्वान्गवादी राग, उतरान्गवादी राग, परमेल प्रवेशक राग, संधिप्रकाश राग।	16–27
इकाई 3 – संगीतज्ञों का जीवन परिचय (पं0 एस0एन0 रातनजंकर, बडे गुलाम अली खां एवं विदूषी गिरिजा देवी)।	28–33
इकाई 4 – संगीत संबंधी विषयों पर निबन्ध।	34–41
इकाई 5 – पाठ्यक्रम के रागों देश, शुद्धकल्याण एवं शुद्ध सारंग का परिचय, स्वर विस्तार एवं स्वर समुह के माध्यम से राग पहचानना तथा उनमें विलंबित ख्याल एवं मध्यलय ख्याल को तानों सहित लिपिबद्ध करना।	42–57
इकाई 6 – पाठ्यक्रम के रागों देश, शुद्धकल्याण एवं शुद्ध सारंग में ध्रुवपद, दुगुन एवं चौगुन लयकारी सहित लिपिबद्ध कराना।	58–68
इकाई 7 – पाठ्यक्रम के तालों में आड़ाचार ताल एवं गजझंपा ताल का परिचय एवं बोल समुह द्वारा ताल पहचानना, पाठ्यक्रम के तालों में आड़ाचार ताल एवं गजझंपा ताल के ठेके को दुगुन, तिगुन एवं चौगुन लयकारी सहित लिपिबद्ध करना।	69–74

इकाई 1 – भारतीय संगीत का इतिहास प्राचीनकाल

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्‌देश्य
1.3 भारतीय संगीत का इतिहास
    1.3.1 प्राचीन काल
1.4 भारतीय संगीत के तत्व
    1.4.1 गीत शैलियाँ
    1.4.2 सांगीतिक तत्व
1.5 सारांश
1.6 शब्दावली
1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0वी0एन0–202) के प्रथम खण्ड की पहली इकाई है।

इस इकाई का अध्ययन भारतीय संगीत के इतिहास क्रम के प्राचीन में हुए सांगीतिक विकास का ज्ञान कराता है। इस इकाई में प्राचीनकाल में रचे गए प्रमुख छः सांगीतिक ग्रन्थों– नारद मुनि कृत नारदीय शिक्षा, भरत मुनि कृत नाट्यशास्त्र, मतंग मुनि कृत बृहद्देशी, पं0 शार्ङ्गदेव कृत संगीत रत्नाकर, पं0 अहोबल कृत संगीत पारिजात तथा रामामात्य कृत स्वरमेलकलानिधि में वर्णित मुख्य सांगीतिक तत्वों पर प्रकाश डाला गया है। इसके अतिरिक्त इस इकाई के अध्ययन से आपको उत्तर व दक्षिण भारतीय संगीत में प्रचलित कुछ प्रमुख गायन शैलियों का भी ज्ञान प्राप्त होगा। इस इकाई में भारतीय संगीत में प्रचलित कुछ विशिष्ट तत्वों तथा शब्दों की व्याख्या भी प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप भारतीय संगीत के इतिहास(प्राचीनकाल से मध्यकाल तक) को भली–भांति जान पाएंगे तथा प्राचीन से लेकर मध्यकाल तक के संगीत के प्रचारकों के बारे में भी जान सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

- भारतीय संगीत के विकास क्रम को समझ सकेंगे।
- जान सकेंगे कि भारतीय संगीत के कौन–कौन से महत्वपूर्ण ग्रंथ प्राचीन काल में रचे गए व उनमें किन–किन विषयों का वर्णन किया गया है। इन्हीं ग्रंथों से प्राचीन कालीन अनेक संगीतज्ञों के नाम भी ज्ञात होते हैं जिनके भारतीय संगीत में योगदान के विषय में हमें पूर्ण रूप से ज्ञान नहीं है। अर्थात् उनके ग्रंथ आदि आधुनिक काल में प्राप्त नहीं हैं।
- वर्तमान भारतीय संगीत के विभिन्न तत्वों के विषय में भी जान सकेंगे।

1.3 भारतीय संगीत का इतिहास

किसी क्षेत्र विशेष का इतिहास वहां के निवासियों की राजनैतिक विचारधारा, आर्थिकी, पर्यावरण तथा संस्कृति का द्योतक होता है। भारतीय संगीत, भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग व पहचान है।

आधुनिक कालीन विद्वानों द्वारा भारतीय संगीत के ऐतिहासिक क्रम को मुख्य रूप से दो भागों में विभक्त किया गया है – प्रागऐतिहासिक काल तथा ऐतिहासिक काल।

प्रागऐतिहासिक काल के अन्तर्गत भारतीय संगीत के इतिहास का वह भाग समाहित है जिसमें वेद साहित्य, वेदांग साहित्य, पुराण, रामायण व महाभारत महाकाव्य तथा बौद्ध व जैन धर्म ग्रंथ रचे गए। इन ग्रंथों में भारतीय संगीत के उद्‌गम व विकास क्रम के अनेक प्रमाण प्राप्त होते हैं। इन ग्रंथों में पौराणिक युग के अनेक सांगीतिक विद्वानों, विभिन्न सांगीतिक तत्वों नृत्य, गीत विधाओं, वाद्यों आदि का वर्णन प्राप्त होता है। भारतीय संगीत के इतिहास का यह प्रथम काल खण्ड माना जाता है। इस काल खण्ड को वैदिक युग अथवा पौराणिक युग भी कहा जाता है। इस युग में रचे गए ग्रंथों का सही–सही समय निर्धारण नहीं हो पाया है। इस युग में भारतीय चिन्तन, बौद्धिक विचारधारा, सभ्यता एवं संस्कृति को व्यक्त करने वाले अनेक ग्रंथ रचे गए जैसे–वेद, उपनिषद, शिक्षा ग्रंथ, ब्राह्मण ग्रंथ, रामायण, महाभारत, 18 महापुराण, बौद्ध व जैन धर्म साहित्य आदि।

इतिहासकारों के अनुसार जिस काल खण्ड की तिथि निर्धारित की जा चुकी है। वह काल खण्ड ऐतिहासिक काल कहलाता है। प्राचीन भारतीय संगीत के ग्रंथों में उनकी लेखन तिथियां प्राप्त नहीं होती। इस दृष्टिकोण से आधुनिक इतिहासकारों व संगीतकारों को संगीत के ग्रंथों की लेखन तिथियां निर्धारित करने के लिए उन ग्रंथों में दिए गए नामोल्लेखों, आख्यानों आदि अनेक प्रकार के तथ्यों पर आश्रित रहना पड़ता है। इस प्रकार निर्धारित की गई तिथियां अनुमानित तिथियां ही होती हैं। इस आधार पर भारतीय संगीत के तत्वों को व्यक्त करने वाला प्रथम ग्रंथ नारदीय शिक्षा है, जिसका रचना काल निर्धारित किया जा चुका है। भारतीय संगीत के दृष्टिकोण से ऐतिहासिक काल को तीन खण्डों में वर्गीकृत किया जाता है – प्राचीन काल(8वीं शताब्दी ई0पू0 से 12वीं शताब्दी ई0 तक), मध्य काल(13वीं शताब्दी ई0 से 18वीं शताब्दी ई0 तक) तथा आधुनिक काल(19वीं शताब्दी से वर्तमान काल)। इस इकाई में प्राचीन काल में रचे गए सांगीतिक ग्रंथों व तत्कालीन सांगीतिक परम्पराओं का अध्ययन प्रस्तुत है।

<u>प्राचीन काल(8वीं शताब्दी ई0पू0 से 12वीं शताब्दी ई0 तक)</u> :–

<u>नारद मुनि कृत नारदीय शिक्षा</u> – नारदीय शिक्षा ग्रंथ की रचना नारद मुनि ने की है। इस ग्रंथ का रचना काल 8वीं शताब्दी ई0पू0 से 5वी शताब्दी ई0पू0 के मध्य माना गया है। यह ग्रंथ आधुनिक काल में ज्ञात संगीत विषयक प्रथम ग्रंथ है। यह ग्रंथ मूल रूप से दो खण्डों में विभक्त है जिन्हें प्रपाठक कहा गया है तथा प्रत्येक प्रपाठक में आठ–आठ अध्याय हैं जिन्हें कण्डिका कहा गया है। इस ग्रंथ का प्रथम प्रपाठक साम संगीत तथा द्वितीय प्रपाठक लौकिक संगीत को समर्पित है। इस ग्रंथ में सर्वप्रथम व्यवस्थित रूप में संगीत के तत्वों का उल्लेख किया गया है। इस ग्रंथ में नारद मुनि ने वैदिक स्वरों के नाम इस प्रकार बताए हैं–क्रुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मंद्र व अतिस्वार। इस ग्रंथ में वैदिक तथा लौकिक स्वरों की तुलना भी प्राप्त होती है। नारद मुनि के अनुसार वैदिक स्वर क्रुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मंद्र व अतिस्वार ही वेणु पर स्थित क्रमशः पंचम, मध्यम, गान्धार, ऋषभ, षड्ज, धैवत व निषाद स्वर हैं। इससे ज्ञात होता है कि वैदिक सप्तक वक्र तथा अवरोही क्रम में था। इस ग्रंथ में सांगीतिक सप्त स्वरों के देवता, वर्ण, जाति, उत्पत्ति स्थान, ऋषि, जीवों से उत्पत्ति आदि के वर्णन भी प्राप्त होते हैं। इस ग्रंथ में श्रुति–जाति, स्वरमण्डल, तीन ग्राम, इक्कीस मूर्च्छनाओं, आचार्य व विद्यार्थी के गुणावगुण आदि का भी वर्णन किया गया है। नारदीय शिक्षा में वर्णित नारद के मतों का उल्लेख प्रायः सभी परवर्ती ग्रंथकारों ने अपने–अपने ग्रंथों में किया है।

<u>भरत मुनि कृत नाट्यशास्त्र</u> – जैसा कि नाम से ही ज्ञात हो जाता है कि नाट्यशास्त्र मूल रूप से नाट्य पर आधारित ग्रंथ है। यह ग्रंथ भरत मुनि द्वारा रचित ग्रंथ है। कुछ विद्वान इस ग्रंथ में 33 तो कुछ 36 अध्याय मानते हैं। नाट्य में संगीत का महत्वपूर्ण स्थान होने के कारण इस ग्रंथ के 28 से लेकर 33 तक के अध्यायों में भरत मुनि ने संगीत विषय पर वृहद् चर्चा की है। अतः यह ग्रंथ संगीत के विद्यार्थियों के

लिए भी महत्वपूर्ण ग्रंथ है। नाट्यशास्त्र ग्रंथ का रचना काल दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व से प्रथम शताब्दी ईसवीय तक बहुमत से माना गया है। पहले यह सामान्य मान्यता थी कि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से नाट्यशास्त्र संगीत के तत्वों का वर्णन करने वाला प्रथम ग्रंथ है परंतु नवीनतम शोधों से ज्ञात हुआ है कि नारदीय शिक्षा ग्रंथ नाट्यशास्त्र का पूर्ववर्ती ग्रंथ है। नाट्यशास्त्र ग्रंथ नाट्य पर आधारित है परंतु इस ग्रंथ में उन सभी विषयों से सम्बद्ध तत्व प्राप्त हो जाते हैं जिनका सम्बन्ध नाट्य से है। इसी क्रम में इस ग्रंथ में संगीत विषय का भी व्यवहार हुआ है। नाट्यशास्त्र में संगीत के लिए गान्धर्व संज्ञा प्राप्त होती है। इस ग्रंथ में भरत मुनि ने उतने संगीत का ही उल्लेख किया है जितना नाट्य में प्रयुक्त हो सके, ऐसा स्वयं भरत मुनि का कथन है।

नाट्यशास्त्र ग्रंथ में संगीत के सात स्वरों, बाईस श्रुतियों, दो ग्राम–षड्ज व मध्यम, चौदह मूर्च्छनाओं, सात ग्रामरागों, तीन प्रकार की जातियों, पदाश्रिता गीतियों, ध्रुवा गीतियों, आचार्य व शिष्य के गुणावगुण, गायक के गुणावगुण, आदि अनेक सांगीतिक तत्वों पर विस्तृत चर्चा प्राप्त होती है। भारतीय संगीत का यह प्रथम ज्ञात ग्रंथ है जिसमें भरत मुनि ने चतुःसारणा विधि की सहायता से एक सप्तक में 22 श्रुतियों की स्थिति सिद्ध की है। इस ग्रंथ के 6 एवं 7 अध्याय में रस के विषय में भी विस्तृत चर्चा प्राप्त होती है। नाट्यशास्त्र में आठ रस ही माने गए हैं। भरत मुनि ने शांत रस को रस नहीं माना है। इस ग्रंथ में भरत मुनि ने अनेक पूर्ववर्ती व अपने समकालीन संगीताचार्यों के नामोल्लेख भी किया है जैसे–ब्रह्मा, शिव, सरस्वती, पार्वती, शंकर, तुबरु, कोहल, शार्दूल आदि। यद्यपि यह ग्रंथ मूल रूप से नाट्य पर आधारित है परंतु इस ग्रंथ में सर्वप्रथम संगीत के तत्वों पर विस्तृत चर्चा प्राप्त होती है इसलिए संगीत के विद्यार्थियों के लिए यह ग्रंथ बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है।

मतंग मुनि कृत बृहद्देशी – बृहद्देशी संगीत पर आधारित महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इस ग्रंथ की रचना मतंग मुनि द्वारा छठी शताब्दी ईसवी में की गई। इस ग्रंथ में मूल रूप से पांच अध्याय हैं परंतु आधुनिक काल में यह ग्रंथ खण्डित अवस्था में प्राप्त होता है। वर्तमान समय में इस ग्रंथ के ध्वनि, स्वरादि, राग तथा प्रबंध से संबंधित, मात्र तीन अध्याय ही प्राप्त हैं। इस ग्रंथ के ताल तथा वाद्य संगीत से सम्बंधित अध्याय प्राप्त नहीं हैं। माना जाता है कि 14वीं शताब्दी में संगीतराज ग्रंथ के रचयिता महाराणा कुम्भ को बृहद्देशी ग्रंथ का वाद्याध्याय प्राप्त था। ईसवी की आरम्भिक शताब्दियों में रचित सांगीतिक ग्रंथों में भरत मुनि कृत नाट्यशास्त्र के पश्चात् यह एक अतिमहत्वपूर्ण ग्रंथ है। इस ग्रंथ में ही सर्वप्रथम अनेक सांगीतिक संज्ञाओं की शब्द व्युत्पत्ति व उनकी व्याख्या प्रस्तुत की गई है जिन्हें आधुनिक काल तक सभी विद्वान यथावत् स्वीकार करते हैं।

मतंग मुनि ने इस ग्रंथ के प्रारम्भ में देशी ध्वनि, उसके लक्षण, उसके भेद आदि का वर्णन किया है। इस ग्रंथ में वर्णित अन्य प्रमुख विषय हैं–नाद, नादोत्पत्ति, श्रुति, स्वर, ग्राम, मूर्छना, तान, मूर्छना–तान, वर्ण, अलंकार, पद–गीति, स्वर–गीतियां, जाति, राग, राग लक्षण, राग भेद, भाषा व प्रबंध। इस ग्रंथ में अनेक प्राचीन संगीत मनीषियों के नाम व उनके सांगीतिक मतों के भी वर्णन प्राप्त होते हैं, जैसे काश्यप, कोहल, दत्तिल, दुर्गशक्ति, नन्दिकेश्वर, नारद, ब्रह्मा, भरत, महेश्वर, याष्टिक, वल्लभ, विश्वावसु, शार्दूल आदि।

इस ग्रंथ की प्रमुख विशेषताओं में एक, *राग* शब्द का प्रयोग व व्यवहार है। वर्तमान ज्ञात ग्रंथों में यह प्रथम ग्रंथ है जिसमें राग के विवरण, व्याख्या व व्यवहार के उल्लेख प्राप्त होते हैं। राग की यही व्याख्या आधुनिक काल तक इसी प्रकार स्वीकार की गई है। इसके अतिरिक्त भारतीय संगीत का यह एक मात्र ग्रंथ है जिसमें बारह स्वरों की मूर्च्छनाएं भी बताई गई हैं। मतंग मुनि के इस मत को भारतीय संगीत में द्वादश–स्वर मूर्छनावाद कहा जाता है। परंतु यह मत प्रचलित नहीं हो पाया। इस ग्रंथ में सर्वप्रथम षड्ज व मध्यम दोनों ग्रामों के श्रुति–मण्डल, स्वर–मण्डल तथा मूर्च्छना–मण्डल भी दिए गए हैं। इस ग्रंथ में ही सर्वप्रथम सात सांगीतिक स्वरों के गेय रूप–सा, रि, गा, म, प, ध तथा नि भी प्राप्त होते हैं। अतः बृहद्देशी ग्रंथ संगीत के विद्यार्थियों के लिए एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है।

1.4 भारतीय संगीत के तत्व

इस खण्ड के दो भाग हैं – गीत शैलियां व सांगीतिक तत्व। प्रथम खण्ड के अंतर्गत उत्तर व दक्षिण भारतीय संगीत में प्रचलित प्रमुख गीत शैलियों का वर्णन किया गया है तथा द्वितीय खण्ड में भारतीय संगीत शास्त्र में वर्णित अनेक प्रमुख तत्वों को समझाया गया है।

1.4.1 गीत शैलियां :–

ध्रुवपद – ध्रुवपद, आधुनिक उत्तर भारतीय संगीत में प्रचलित गीत शैलियों में प्राचीनतम् गीत शैली है। इस गीत शैली की सृजना किसने की इस विषय में विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि इस गीत शैली का विकास प्रबन्ध नामक प्राचीन कालीन गीत शैली से हुआ है। वहीं कुछ अन्य विद्वानों का मत है कि इस गीत शैली का विकास 15वीं शताब्दी में ग्वालियर राज्य के शासक मानसिंह तोमर ने किया। कुछ विद्वानों का मत है कि इस गीत शैली का विकास 15वीं शताब्दी से पूर्व ही हो चुका था। उनके अनुसार बादशाह अकबर के दरबार में ध्रुवपद गायन के अनेक प्रमाण प्राप्त होते हैं।

ध्रुवपद एक धीर–गम्भीर गीत शैली है। इसका गायन विलम्बित लय अथवा ठहरी हुई मध्य लय में किया जाता है। ध्रुवपद गीत शैली की बंदिशें प्रायः संस्कृत, ब्रज, भोजपुरी, अवधी, मैथिल व हिन्दी भाषा व बोलियों में रची गई हैं। इस गीत शैली द्वारा प्रमुख रूप से शांत, भक्ति, श्रृंगार, करुण, वीर व रौद्र रसों व भावों को व्यक्त किया जाता है। इस गीत शैली का गायन चारताल, तीव्रा, सूलफाक, रुद्र, ब्रह्म, लक्ष्मी, मत्त, सूल आदि तालों में किया जाता है। ध्रुवपद गायन की संगत पखावज या मृदंग नामक ताल वाद्य से की जाती है। इस गीत शैली में प्रायः चार खण्ड–स्थाई, अंतरा, संचारी व आभोग होते हैं। इसके अंतिम खण्ड आभोग में गीत रचनाकार व उसके आश्रयदाता का नामोल्लेख रहता है। कुछ ध्रुवपद चार से कम खण्डों के भी प्राप्त होते हैं। आधुनिक काल में स्थाई व अंतरा युक्त अनेक ध्रुवपद प्रचलित हैं।

ध्रुवपद का गायन नोम–तोम के आलाप से आरम्भ किया जाता है। यह आलाप बहुत विस्तृत व बिना ताल के किया जाता है। इस आलाप के पश्चात् बंदिश का गायन किया जाता है। बंदिश गायन के अंतर्गत विभिन्न लयकारियों में उपज करते हुए बंदिश का विस्तार करके दिखाया जाता है। इस गीत शैली में बंदिश का विस्तार बोल तानों के माध्यम से भी किया जाता है। इस गीत शैली में नोम–तोम के आलाप व बंदिश की उपज करते हुए विभिन्न प्रकार के गमक जैसे–कण, मींड, खटका, आंदोलन, तिरिप, हुम्फित, कम्पित आदि का प्रयोग विशेष रूप से किया जाता है। रागों की शुद्धता का ध्यान ध्रुवपद गायन की विशेषता है। भारतीय संगीत में ध्रुवपद गीत शैली को संपूर्ण गीत शैली माना जाता है जिसके माध्यम से कलाकार संगीत के प्रायः समस्त तत्वों को व अपने पूर्ण कला कौशल को प्रदर्शित करता है। प्राचीन भारत में अनेक प्रसिद्ध ध्रुवपद गायक रहे हैं–स्वामी हरिदास, बैजू बावरा, तानसेन, गोपाल लाल, चिन्तामणि मिश्र आदि।

धमार – धमार गीत शैली का नाम उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्रचलित प्रमुख गीत शैलियों में लिया जाता है। धमार गीत शैली के विषय में मान्यता है कि इस गीत शैली की सृजना ग्वालियर नरेश राजा मानसिंह तोमर की पत्नी रानी गुर्जरी के संगीत गुरु बैजू बावरा ने की है। धमार गीत शैली की विषय वस्तु होली त्यौहार व बसंत ऋतु होते हैं। इस गीत शैली की बंदिशों में होली त्यौहार व बसंत ऋतु का वर्णन रहता है। शास्त्रीय संगीत का होली गीत होने के कारण धमार गीत शैली को पक्की होरी या होली गीत भी कहा जाता है। प्रायः धमार गीत का गायन फागुन व चैत्र मास में बसंत ऋतु के अवसर पर ही किया जाता है।

धमार, ध्रुवपद गीत शैली की तुलना में चंचल गीत शैली है। इसका गायन मध्य लय में किया जाता है। धमार गीत शैली की बंदिशें प्रायः संस्कृत, ब्रज, भोजपुरी, अवधी, मैथिल व हिन्दी भाषा व बोलियों में प्राप्त होती हैं। इस गीत शैली द्वारा प्रमुख रूप से श्रृंगार व हास–परिहास रसों व भावों को व्यक्त किया जाता है। इस गीत शैली का गायन मात्र धमार नामक ताल में ही किया जाता है। धमार गायन की संगत पखावज या मृदंग नामक ताल वाद्य से की जाती है। इस गीत शैली में प्रायः चार खण्ड–स्थाई, अंतरा, संचारी व आभोग होते हैं। कुछ धमार चार से कम खण्डों के भी प्राप्त होते हैं। आधुनिक काल में स्थाई व अंतरा युक्त अनेक धमार प्रचलित हैं।

धमार गायन ध्रुवपद गायन से साम्य रखता है। ध्रुवपद के समान धमार गीत शैली का गायन नोम–तोम के आलाप से आरम्भ किया जाता है। यह आलाप बहुत विस्तृत व बिना ताल के किया जाता है। इस आलाप के पश्चात् बंदिश का गायन किया जाता है। बंदिश गायन के अंतर्गत विभिन्न लयकारियों में उपज करते हुए बंदिश का विस्तार करके दिखाया जाता है। इस गीत शैली में ध्रुवपद के समान ही बंदिश का विस्तार बोल तानों के माध्यम से भी किया जाता है। इस गीत शैली में नोम–तोम के आलाप व बंदिश की उपज करते हुए विभिन्न प्रकार के गमक जैसे–कण, मींड, खटका, आंदोलन, तिरिप, हुम्फित, कम्पित आदि का प्रयोग विशेष रूप से किया जाता है। ध्रुवपद गायन के समान धमार गायन में भी रागों की शुद्धता का ध्यान इसकी विशेषता है। प्रायः धमार की बंदिशें बसंत ऋतु कालीन रागों में निबद्ध रहती हैं।

ख्याल – आधुनिक कालीन उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में ख्याल गीत शैली सर्वाधिक प्रचलित गीत शैली है। इस गीत शैली की सृजना किसने की इस विषय में बहुत मतभेद है। कुछ विद्वानों का मत है कि ख्याल गीत शैली का विकास अमीर खुसरो ने किया। वहीं कुछ विद्वानों का मानना है कि ख्याल गीत शैली का विकास 18वीं शताब्दी में खुसरो खॉं नामक प्रसिद्ध संगीतकार द्वारा किया गया। वहीं कुछ अन्य विद्वानों का मानना है कि ख्याल गीत शैली का विकास ध्रुवपद गीत शैली से हुआ है कुछ विद्वानों का मानना है कि प्रबंध नामक प्राचीन गीत शैली ही खयाल गीत शैली के विकास का आदिम स्रोत है।

ख्याल का गायन विलम्बित, मध्य तथा द्रुत तीनों लयों में किया जाता है। ख्याल गीत शैली की बंदिशें प्रायः ब्रज, भोजपुरी, अवधी, खड़ी, मैथिल, पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती, मराठी व हिन्दी भाषा व बोलियों में प्राप्त होती हैं। इस गीत शैली द्वारा प्रमुख रूप से शांत, भक्ति, श्रृंगार, करुण, वीर, रौद्र, वियोग, हास–परिहास आदि रसों व भावों को व्यक्त किया जाता है। इस गीत शैली का गायन एकताल, तीनताल, तिलवाड़ा, झूमरा, रूपक, झप, आड़ाचार ताल आदि अनेक तालों में ही किया जाता है। ख्याल गायन की संगत तबला नामक ताल वाद्य से की जाती है। इस गीत शैली में दो खण्ड–स्थाई व अंतरा ही होते हैं तथा गीत रचनाकार व उसके आश्रयदाता का नाम अंतरा नामक खण्ड में उल्लिखित रहता है।

ख्याल का गायन राग सूचक सूक्ष्म आलाप से आरम्भ किया जाता है। यह आलाप विस्तृत नहीं होता परंतु इसके माध्यम से राग का स्वरूप तुरंत प्रस्तुत कर दिया जाता है। इस आलाप के पश्चात् बंदिश का गायन किया जाता है। बंदिश गायन के अंतर्गत विभिन्न प्रकार के विस्तृत आलाप या बोल आलाप, सरगम, बहलावा, बोल तान व तान के माध्यम से बंदिश का विस्तार करके दिखाया जाता है। ख्याल गायन में रागों की शुद्धता का भी ध्यान रखा जाता है। ख्याल गीत शैली के दो प्रकार भारतीय संगीत में प्रचलित हैं–बड़ा ख्याल व छोटा ख्याल। विलम्बित लय में गाया जाने वाला ख्याल बड़ा ख्याल तथा मध्य व द्रुत लय में गाया जाने वाला ख्याल छोटा ख्याल कहलाता है। इनके अतिरिक्त ध्रुवपद अंग से झपताल में गाए जाने वाले ख्याल को ख्याल न कह कर, सादरा कहा जाता है।

तराना – यह गीत शैली उत्तर भारतीय संगीत में प्रचलित है। इस गीत शैली के विषय में मान्यता है कि इसकी सृजना अमीर खुसरो ने की थी। तराना की बंदिश में सार्थक शब्दों के स्थान पर ताल वाद्यों के पटाक्षर व तंतु वाद्यों के कोण व मिज़राब के निरर्थक बोल रहते हैं। कुछ प्राचीन तरानों में अरबी–फारसी के कुछ शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। ऐसा माना जाता है कि भारतीय संगीत से प्रभावित होकर अमीर खुसरो ने तत्कालीन भारतीय भाषा–संस्कृत के शब्दों के स्थान पर, इस गीत शैली में निरर्थक शब्दों का प्रयोग किया। तराना गीत शैली का गायन विलम्बित, मध्य तथा द्रुत तीनों लयों में किया जाता है। इस गीत शैली द्वारा वीर, रौद्र तथा चमत्कार रसों व भावों को व्यक्त किया जाता है। इस गीत शैली का गायन एकताल, तीनताल, तिलवाड़ा, झूमरा, रूपक, झप, आड़ाचार ताल आदि अनेक तालों में ही किया जाता है। तराना गायन की संगत तबला नामक ताल वाद्य से की जाती है। इस गीत शैली में दो खण्ड–स्थाई व अंतरा ही होते हैं। तराने की बंदिश का विस्तार पटाक्षरों का प्रयोग करते हुए लयकारी व तानों के माध्यम से किया जाता है।

ठुमरी – आधुनिक कालीन उत्तर भारतीय संगीत में ठुमरी गीत शैली का बहुत प्रचार है। विद्वानों के अनुसार यह गीत शैली उपशास्त्रीय संगीत के अंतर्गत वर्गीकृत की जाती है वहीं कुछ विद्वान इसे शास्त्रीय

संगीत के अंतर्गत वर्गीकृत करने के पक्षधर हैं। इस गीत शैली की सृजना किसने की इस विषय में मतभेद है। कुछ विद्वानों का मत है कि ठुमरी गीत शैली का विकास मियां शौरी ने किया।

ठुमरी का गायन विलम्बित तथा मध्य लयों में किया जाता है। ठुमरी गीत शैली की बंदिशें प्रायः ब्रज, भोजपुरी, अवधी, खड़ी, मैथिल, पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती, मराठी व हिन्दी भाषा व बोलियों में प्राप्त होती हैं। इस गीत शैली द्वारा प्रमुख रूप से श्रृंगार, करुण, हास–परिहास, वियोग, वियोग श्रृंगार, आदि रसों व भावों को व्यक्त किया जाता है। इस गीत शैली का गायन तीनताल, दीपचंदी, जत, कहरवा, पंजाबी, खेमटा आदि तालों में ही किया जाता है। ठुमरी गायन की संगत तबला नामक ताल वाद्य से की जाती है। इस गीत शैली में दो खण्ड–स्थाई व अंतरा ही होते हैं।

ठुमरी का गायन राग सूचक सूक्ष्म आलाप से आरम्भ किया जाता है। इस आलाप के पश्चात् बंदिश का गायन किया जाता है। ठुमरी गायन का विस्तार आलाप या बोल आलाप, सरगम, बोल बनाव, छोटी–छोटी तानों व बोल तानों से किया जाता है। ठुमरी गायन में रागों की शुद्धता पर विशेष ध्यान नहीं रखा जाता। ठुमरी प्रायः खमाज, काफी, सोरठ, देश, पीलू, तिलंग, आदि जैसे क्षुद्र प्रकृति के रागों में निबद्ध होती है। ठुमरी गीत शैली के दो प्रकार भारतीय संगीत में प्रचलित हैं–पूर्व अंग की ठुमरी व पश्चिम अंग की ठुमरी। पूर्व अंग की ठुमरी उत्तर प्रदेश, बिहार व बंगाल में प्रचलित है वहीं पश्चिम अंग की ठुमरी पंजाब व उसके समीपवर्ती क्षेत्रों में प्रचलित है। पश्चिम अंग की ठुमरी का गायन टप्पा अंग से किया जाता है।

स्वर मालिका – यह गीत शैली उत्तर भारतीय संगीत में प्रचलित है। ऐसा गीत या बंदिश जिसका कवित्त भाग सार्थक शब्दों के स्थान पर राग के स्वरों से बनाया गया हो स्वर मालिका कहलाता है। स्वर मालिका में शब्दों के स्थान पर राग के स्वरों से बंदिश की रचना की जाती है व उन्हीं स्वरों को तालबद्ध कर गाया जाता है। स्वर मालिका की बंदिश का प्रयोग राग व उसके स्वरों के अभ्यास करने के लिए किया जाता है। स्वर मालिका की बंदिश में दो खण्ड ही होते हैं–स्थाई व अंतरा।

लक्षण गीत – यह गीत प्रकार उत्तर भारतीय संगीत में प्रचलित है। लक्षण गीत ऐसे गीत हैं जिनमें राग के लक्षणों का वर्णन रहता है। इन गीत प्रकारों में सार्थक शब्द रचना के साथ ही, जिस राग में लक्षण गीत निबद्ध होते हैं उस राग के आरोहावरोह, वादी–संवादी, थाट, जाति, गायन समय आदि का भी वर्णन रहता है। ये गीत प्रकार अभ्यास हेतु बनाए जाते हैं सामान्यतया इनका प्रदर्शन मंच पर नहीं किया जाता। परंतु इनके अभ्यास से विद्यार्थी को राग के लक्षण सहज ही याद हो जाते हैं। इसकी बंदिश सूक्ष्म होती है व उसमें दो खण्ड–स्थाई व अंतरा ही होते हैं।

पदम् – यह कर्नाटक संगीत शैली की विशद गीत शैली है। यह विलम्बित लय की गीत शैली है व गाम्भीर्य के दृष्टिकोण से हिंदुस्तानी गीत शैली के ध्रुवपद गायन से साम्य रखती है। पदम् में प्रायः तीन खण्ड होते हैं–पल्लवी, अनुपल्लवी तथा चरणम्। परंतु कलाकार अपनी इच्छानुसार पल्लवी या अनुपल्लवी से पदम् का गायन प्रारम्भ कर सकता है। पदम् सभी रसों को व्यक्त करने वाली गीतशैली है। भाव प्रधान होने के कारण पदम् को नृत्य व अभिनय के उपयुक्त माना जाता है। इस गीत शैली में स्वर व शब्द रचना दोनों का संतुलन अपेक्षित होता है। इसमें राग–भाव की अभिव्यक्ति करना एक अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष है।

लगभग 14वीं शताब्दी ई0 तक पद गायन उत्तर भारत में भी प्रचलित था। जयदेव का गीत गोविंद ग्रंथ इसी शैली में रचा गया है। दक्षिण भारत में 15वीं शताब्दी ई0 में पुरंदनदास, कनकदास, जगन्नाथदास आदि ने अनेक पदों की रचना की है। दक्षिण भारत के भक्त–कवि व गायक क्षेत्रज्ञ ने हजारों पदों की रचना की है।

कृति – कर्नाटक संगीत में कृति का वही स्थान है जो हिंदुस्तानी संगीत में ख्याल का है। राग विस्तार की इस प्रौढ़ रचना में स्वर का प्रमुख तथा साहित्य का गौण स्थान रहता है। कृति गायन के लिए संगीत के गूढ़ ज्ञान की आवश्यकता होती है अतः इसका गायन साधारण कलाकार के लिए अत्यंत दुष्कर है। कृति के न्यूनतम तीन खण्ड–पल्लवी, अनुपल्लवी तथा चरणम् होते हैं। कृति के अंतर्गत चिट्टैस्वर, राग प्रदर्शक स्वर–संगतियां, स्वर–साहित्य तथा गमक का भी समावेश रहता है। कृति के गायन में इन सभी का कमानुसार गायन होता है। उत्तर भारतीय संगीत की गायन शैली ख्याल के समान ही इसमें भी

बोल–आलाप एवं बोल–तानें ली जाती हैं, जिन्हें नेरावल कहते हैं। इसका गायन मध्य तथा द्रुत लय में ही किया जाता है। कर्नाटक संगीत में संत त्यागराजा, मुत्थुस्वामी दीक्षितर तथा स्वाति तिरुनल की रचित कृतियां बहुत सम्मान से गाई जाती हैं।

कीर्तनम् – दक्षिण भारतीय संगीत में कीर्तनम् गीत शैली का स्थान सर्वोपरि है। कीर्तनम् भक्ति रस प्रधान गीत शैली है। इस गीत शैली का विकास प्राचीन काल से ही दक्षिण भारत के भक्त कलाकारों द्वारा होता रहा है। इस गीत शैली में तीन मुख्य खण्ड होते हैं–पल्लवी, अनुपल्लवी तथा चरणम्। कीर्तनम् सरल और प्रचलित रागों में निबद्ध होते हैं। उनकी गायन शैली भी सरल और भावमय होती है। कीर्तनम् के प्रथम रचयिता ताल्लपाकम्(14–15वीं षता0 ई0) को माना जाता है। इनके अतिरिक्त दक्षिणी संगीत शैली की त्रिमूर्ति स्वामी त्यागराजा, मुत्थुस्वामी दीक्षितर तथा श्यामा शास्त्री को भी प्रमुख कीर्तनकारों में स्थान प्राप्त है। इनके अतिरिक्त पुरंदरदास, स्वाति तिरुनल, मैसूर सदाशिवय्यर तथा गोपालकृष्ण भारती को भी प्रमुख कीर्तनकारों में स्थान प्राप्त है।

राग मालिका – यह दक्षिण भारत में प्रचलित गीत शैली है। राग मालिका में गीत के विभिन्न खण्डों को भिन्न–भिन्न रागों में गाया जाता है। इस गीत शैली के विभागों में अलग–अलग रागों के नाम व उनकी स्वरावलियां निबद्ध रहती हैं। इस गीत शैली में पल्लवी व अनुपल्लवी नामक दो खण्ड होते हैं। अनुपल्लवी के गायन के पश्चात् रचना में प्रयुक्त रागों में चिट्टैस्वर गाए जाते हैं तथा उनको बहुत कुशलता से पल्लवी के राग में मिलाया जाता है। जिन स्वर समूहों के माध्यम से दो रागों को मिलाया जाता है उन्हें मुकुट–स्वर कहा जाता है। दक्षिण भारतीय संगीत में पं0 व्यंकटमखि, मत्थुस्वामी दीक्षितर, स्वाति तिरुनल आदि ने अनेक रागमालिकाओं की रचना की है।

तिल्लाना – तिल्लाना गीत शैली उत्तर भारतीय संगीत की तराना गीत शैली से साम्य रखती है। तिल्लाना गीत शैली दक्षिण भारतीय संगीत में प्रचलित चमत्कारिक गीत शैली है। यह द्रुत लय में गाई जाने वाली गीत शैली है। तिल्लाना गीत की बंदिश की रचना व उसका विस्तार मृदंगम् नामक दक्षिण भारतीय ताल वाद्य के बोलों से किया जाता है। इन बोलों को चिट्टैस्वर कहा जाता है। दक्षिण भारतीय संगीत में स्वाति तिरुनल, मुत्तैया भागवतर आदि के रचित तिल्लाना बहुत प्रसिद्ध हैं।

जावली – इस दक्षिण भारतीय गीत शैली की तुलना उत्तर भारतीय ठुमरी नामक गीत शैली से की जाती है। जवाली शब्द कर्नाटक भाषा के जावल शब्द से उत्पन्न माना गया है जिसका अर्थ है–श्रृंगार। जवाली श्रृंगार रसमय गीत शैली है। इस गीत में एक पल्लवी तथा दो या तीन चरणम् होते हैं। इसके गायन में राग की शुद्धता पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता तथा ठुमरी गीत शैली की ही भांति स्वर–वैचित्र्य का प्रयोग जावली की विशेषता है।

1.4.2 सांगीतिक तत्व :–

जाति – प्राचीन भारतीय संगीत में आधुनिक युग के समान राग गायन का अस्तित्व नहीं था। उस काल के संगीत में जाति गायन का प्रचार था। जाति गायन का सर्वप्रथम उल्लेख भरत मुनि के नाट्यशास्त्र में प्राप्त होता है। भरत मुनि ने जाति की परिभाषा नहीं दी है परंतु जाति के 10 लक्षणों का वर्णन किया है :–

ग्रह स्वर – जिस स्वर से जाति गायन प्रारम्भ किया जाता है, वह ग्रह स्वर है।

अंश स्वर – जाति में प्रयुक्त होने वाले सभी स्वरों में से जिस स्वर की प्रधानता रहती है, वह अंश स्वर कहलाता है।

न्यास स्वर – जिस स्वर पर जाति गायन का समापन किया जाता है वह न्यास स्वर कहलाता है।

अपन्यास स्वर – जाति गायन के विभिन्न खण्डों के विश्रांति स्वरों को अपन्यास स्वर कहते हैं।

औडुवत्व – जाति में सात के स्थान पर पांच स्वर ही प्रयोग करने का नियम, औडुवत्व या औडुव कहा जाता है।

षाडवत्व – जाति में सात के स्थान पर छः स्वर ही प्रयोग करने का नियम, षाडवत्व या षाडव कहा जाता है।

<u>अल्पत्व</u> – किसी स्वर का नियमानुसार जाति गायन में अल्प प्रयोग करना, अल्पत्व कहलाता है।
<u>बहुत्व</u> – जाति गायन में किसी स्वर की नियमानुसार बहुलता से प्रयोग की विधि, बहुत्व कहलाती है।
<u>तार</u> – जाति गायन में तार सप्तक की सीमा निर्धारण का स्वर का नियम तारत्व कहा जाता है।
<u>मन्द्र</u> – जाति गायन में मन्द्र सप्तक की सीमा निर्धारण का स्वर का नियम मन्द्रत्व कहा जाता है।

जब ये लक्षण या नियम किसी स्वरावली पर प्रयुक्त किए जाते हैं तो वह गायन शैली, जाति कहलाती है। भरत मुनि ने जातियां दो प्रकार की मानी हैं—शुद्धा व विकृता। परंतु इनके अतिरिक्त उन्होंने दो या अधिक जातियों के मेल से उत्पन्न संसर्गजा विकृता जातियां भी बताई हैं।

<u>ग्राम</u> – सामान्य भाषा में ग्राम से तात्पर्य ऐसे स्थान विशेष से है जहां कुछ मनुष्यों के परिवार किसी निश्चित व्यवस्था के अंतर्गत निवास करते हैं। संगीत में भी इस शब्द का प्रयोग इसी प्रकार हुआ है। जब 22 श्रुतियों रूपी स्थान पर सात स्वर रूपी परिवार कमपूर्वक किसी निश्चित व्यवस्था के अंतर्गत स्थित होते हैं तो वह ग्राम कहलाता है। जब श्रुतियों पर स्वरों की स्थिति परिवर्तित की जाती है तब ग्राम भी परिवर्तित हो जाता है। प्राचीन भारतीय संगीत में तीन ग्राम माने गए हैं—षड्ज ग्राम, मध्यम ग्राम व गान्धार ग्राम। जो स्वर इन ग्रामों के नामों को व्यक्त करते हैं वे ही इन तीनों ग्रामों में प्रारम्भिक स्वर हैं। इन तीनों ग्रामों में से गान्धार ग्राम वैदिक काल में ही लुप्त हो गया था। षड्ज व मध्यम ग्रामों की व्याख्या सर्वप्रथम भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र ग्रंथ में प्रस्तुत की है। परवर्ती सभी ग्रंथकारों ने इन दोनों ग्रामों का वर्णन इसी प्रकार किया है।

<u>षड्ज ग्राम</u> – इस ग्राम में प्रथम स्वर षड्ज है। इस ग्राम में षड्ज स्वर की चार श्रुतियां हैं, ऋषभ की तीन, गांधार की दो, मध्यम की चार, पंचम की चार, धैवत की तीन तथा निषाद की दो श्रुतियां हैं। इस आधार पर 22 श्रुतियों में से षड्ज चौथी श्रुति पर स्थित है, ऋषभ सातवीं पर, गांधार नौवीं पर, मध्यम तेरहवीं पर, पंचम सतरहवीं पर, धैवत बीसवीं पर तथा निषाद बाईसवीं श्रुति पर स्थित है। इस प्रकार षड्ज ग्राम में श्रुति—स्वर विभाजन निम्नवत् है—

4,	3,	2,	4,	4,	3,	2।
सा,	रि,	गा,	म,	प,	ध,	नि।

<u>मध्यम ग्राम</u> – इस ग्राम में प्रथम स्वर मध्यम है। इस ग्राम में मध्यम स्वर की चार श्रुतियां हैं, पंचम की तीन, धैवत की चार, निषाद की दो, षड्ज की चार, ऋषभ की तीन तथा गांधार की दो श्रुतियां हैं। अतः मध्यम ग्राम में श्रुति—स्वर विभाजन निम्नवत् है—

4,	3,	4,	2,	4,	3,	2।
म,	प,	ध,	नि,	सा,	रि,	गा।

मूर्च्छना या मूर्छना – मूर्च्छना शब्द की उत्पत्ति मूर्च्छ् धातु से हुई है जिसका अर्थ है बेसुध होना, मोह होना, भ्रमित होना, ममता, राग, प्रेम, आसक्ति आदि। संगीत में सात स्वरों के कमपूर्वक आरोह—अवरोह करने को मूर्च्छना कहते हैं। भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र में मूर्च्छना को पारिभाषित करते हुए कहा हैः—

कमयुक्ताः स्वराः सप्त मूर्छनेत्यभिसंज्ञिताः।

अर्थात् कम युक्त सात स्वरों को मूर्छना कहा जाता है। तात्पर्य यह कि कमानुसार सात स्वरों का आरोह—अवरोह करना मूर्छना कहलाता है। ग्राम भी कमपूर्वक व्यवस्थित किए गए सात स्वरों का समूह है परंतु ग्राम गाया नहीं जाता। ग्राम के सात स्वरों को एक—एक करके आधार स्वर मानकर आगे के सात स्वरों का आरोह—अवरोह करना ही मूर्छना कहलाता है। मूर्छनाएं अवरोही कम में होती हैं। ग्राम से ही मूर्छना बनाई जाती हैं व मूर्छना का ही गान किया जाता था। एक ग्राम के सात स्वरों से सात भिन्न—भिन्न मूर्छनाएं बनती हैं। इस प्रकार प्राचीन भारतीय संगीत में प्रचलित रहे दो ग्रामों—षड्ज व मध्यम से कुल चौदह मूर्छनाएं बनाई जाती थीं। भरत मुनि ने दोनों ग्रामों की चौदह मूर्छनाओं के नाम व स्वर निम्नवत् दिए हैं—

<u>षड्ज ग्रामिक मूर्छनाएं</u>

मूर्छना नाम	मूर्छना के स्वर
उत्तरमंद्रा	सा रि गा म प ध नि
रजनी	नि सा रि गा म प ध
उत्तरायता	ध नि सा रि गा म प
शुद्ध षड्जा	प ध नि सा रि गा म
मत्सरीकृता	म प ध नि सा रि गा
अश्वक्रांता	गा म प ध नि सा रि
अभिरुद्गता	रि गा म प ध नि सा

<u>मध्यम ग्रामिक मूर्छनाएं</u>

मूर्छना नाम	मूर्छना के स्वर
सौवीरी	म प ध नि सा रि गा
हरिणाश्वा	गा म प ध नि सा रि
कलोपनता	रि गा म प ध नि सा
शुद्ध मध्यमा	सा रि गा म प ध नि
मार्गी	नि सा रि गा म प ध
पौरवी	ध नि सा रि गा म प
हृष्यका	प ध नि सा रि गा म

प्राचीन काल में तीन ग्राम प्रचलित रहे इसलिए अनेक ग्रंथों में तीन ग्रामों से इक्कीस मूर्छनाएं मानी गई हैं। परंतु भरत काल में दो ग्राम ही प्रचलित रहे अतः भरत मुनि ने स्वयं दो ही ग्राम व उनकी चौदह मूर्छनाएं ही बताई हैं। भरत मुनि ने मूर्छनाओं के चार भेद माने हैं–शुद्धा, सांतरा, सकाकली तथा साधारणा। परंतु दत्तिल, मतंग मुनि व अन्य अनेक विद्वानों का मत है कि मूर्छनाओं के चार भेद–पूर्णा, सांतरा, सकाकली तथा साधारणीकृता हैं।

<u>राग</u> – राग का शाब्दिक अर्थ है– मोह, प्रेम, आकर्षण, आसक्ति, अनुरक्ति, आनन्द, आदि। संगीत में राग उस विशिष्ट स्वर–समूह को कहा जाता है जिसमें श्रोताओं कों आकर्षित कर उन्हें मंत्रमुग्ध कर देने की क्षमता हो। बृहद्देशी में मतंग मुनि ने राग को पारिभाषित करते हुए कहा हैः–

योऽयं ध्वनिविशेषस्तु स्वरवर्ण विभूषितः।
रंजको जनचित्तानां स रागः कथितो बुधैः।

अर्थात् ऐसी विशेष ध्वनि जो स्वर व वर्ण से विभूषित हो कर जनसमुदाय के चित्त का रंजन करे वह राग कही गई है। तात्पर्य यह कि संगीत के स्वरों व उन स्वरों के प्रयोग करने की विभिन्न रीतियों(वर्ण) से सजी हुई ध्वनि जिसे सुनकर श्रोता भी मोहित हो जाए राग कहलाती है। आधुनिक काल में विद्वानों ने राग के लक्षणों का भी विवेचन किया है। इन लक्षणों का राग में होना अनिवार्य माना गया हैः–

1. राग गाया जाता है। अतः राग को रंजक होना अनिवार्य है।
2. राग में किसी रस की अभिव्यक्ति की क्षमता होनी चाहिए।
3. राग को किसी थाट से उत्पन्न होना चाहिए।
4. राग में आरोह तथा अवरोह दोनों होना आवश्यक है।
5. राग में कम से कम पांच स्वर होने आवश्यक हैं।
6. राग में षड्ज स्वर को वर्जित नहीं किया जा सकता।
7. राग में मध्यम व पंचम स्वर एक साथ वर्जित नहीं किए जा सकते।
8. राग में वादी–अनुवादी स्वरों का होना आवश्यक है परंतु उनके मध्य तीन या चार स्वरों का अंतर होना चाहिए।
9. राग में वादी–संवादी स्वरों में से एक पूर्वांग में व दूसरा उत्तरांग में होना चाहिए।

10. राग में एक स्वर के दो रूप लगातार प्रयोग नहीं किए जा सकते।

थाट या ठाठ – पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे ने उत्तर भारतीय संगीत में प्रचलित रागों को सहज रूप से समझने के लिए, उन्हें वर्गीकृत करने का ढंग विकसित किया जिसे थाट या ठाठ पद्धति कहा जाता है। भारतीय संगीत में थाट को ही मेल भी कहा जाता है। थाट या मेल को पारिभाषित करते हुए उन्होंने कहा है – मेलः स्वरसमूहः स्याद्रागव्यंजनशक्तिमान्।

अर्थात् स्वरों के समूह को मेल कहा जाता है जिसमें रागों को उत्पन्न करने की शक्ति होती है। यद्यपि थाट या मेल स्वरों का समूह मात्र है परंतु पं0 भातखण्डे मेल के कुछ अन्य लक्षण भी बताए हैं:–

1. थाट में सात स्वर होने अनिवार्य हैं।
2. थाट गाया नहीं जाता अतः उसका रंजक होना अनिवार्य नहीं है।
3. थाट में एक स्वर के दो रूप नहीं हो सकते।
4. थाट में आरोह व अवरोह में समान स्वर होने के कारण उसमें आरोह व अवरोह दोनों का होना अनिवार्य नहीं है। अतः थाट में आरोह व अवरोह में से एक होना अनिवार्य है।
5. थाट गाया नहीं जाता परंतु उससे गाए जा सकने वाले राग उत्पन्न किए जा सकें।

पं0 भातखण्डे ने स्वयं इन नियमों पर आधारित दस थाट माने हैं–बिलावल, कल्याण, खमाज, काफी, भैरव, मारवा, पूर्वी, आसावरी, भैरवी तथा तोड़ी। पं0 भातखण्डे ने इन थाटों के लक्षण निम्नवत बताए हैं:–

1. बिलावल	–	सभी स्वर शुद्ध
2. कल्याण	–	तीव्र मध्यम, शेष स्वर शुद्ध
3. खमाज	–	कोमल निषाद, शेष स्वर शुद्ध
4. काफी	–	कोमल गांधार व निषाद, शेष स्वर शुद्ध
5. भैरव	–	कोमल ऋषभ व धैवत, शेष स्वर शुद्ध
6. मारवा	–	कोमल ऋषभ, तीव्र मध्यम, शेष स्वर शुद्ध
7. पूर्वी	–	कोमल ऋषभ व धैवत, तीव्र मध्यम, शेष स्वर शुद्ध
8. आसावरी	–	कोमल गांधार, धैवत व निषाद, शेष स्वर शुद्ध
9. भैरवी	–	कोमल ऋषभ, गांधार, धैवत व निषाद, शेष स्वर शुद्ध
10. तोड़ी	–	कोमल ऋषभ, गांधार व धैवत, तीव्र मध्यम, शेष स्वर शुद्ध

पं0 भातखण्डे ने उत्तर भारतीय संगीत के रागों को उनमें लगने वाले स्वरों के आधार पर इन दस थाटों में वर्गीकृत कर दिया। कुछ राग इन थाटों में वर्गीकृत नहीं किए जा सके इसके लिए पं0 भातखण्डे का मत है कि नवीन पीढ़ी आवश्यकता अनुसार इन थाटों की संख्या बढ़ा सकती है। परंतु स्मरण करने की सुविधा को ध्यान में रख कर स्वयं उन्होंने थाटों की संख्या दस ही स्वीकारी है।

ताल – संगीत स्वर, पद तथा लय के समवेत प्रयोग की कला है। इन तीन तत्वों में से लय समय का सूचक है। संगीत में लय अर्थात् समय को ताल द्वारा नापा व प्रदर्शित किया जाता है। संगीत रतनाकर ग्रंथ में ताल को पारिभाषित करते हुए पं0 शार्ङ्गदेव ने कहा है–

तालस्तल प्रतिष्ठायामिति धातोर्घञ्ि स्मृतः।
गीतम् वाद्यं तथा नृत्तं यतस्तालेप्रतिष्ठितम्।।

पं0 शार्ङ्गदेव के अनुसार किसी वस्तु की स्थापना जिस आधार पर होती है वह आधार तल कहलाता है। गीत, वाद्य तथा नृत्त की स्थापना का तल, ताल कहलाता है। जिस प्रकार सामान्य जीवन में समय नापने के लिए क्षण, घड़ी, प्रहर, दिन, सप्ताह, पक्ष, माह, वर्ष आदि का अस्तित्व स्वीकारा गया है

उसी प्रकार संगीत में समय को नापने के लिए मात्रा, विभाग व आवर्तन पर आधारित ताल की परिकल्पना की गई है।

पं0 शार्ङ्गदेव ने संगीत रत्नाकर में ताल के 10 प्राण बताए हैं जो ताल के आधारभूत तत्व माने गए हैं। जिस प्रकार प्राणों के बिना शरीर का अस्तित्व नहीं है उसी प्रकार इन 10 प्राणों के बिना ताल का कोई अस्तित्व नहीं है। पं0 शार्ङ्गदेव के अनुसार ताल के 10 प्राण निम्नवत् हैं–

कालोमार्गक्रियांगिग्रहोजातिः कला लया।
यति प्रस्तार कश्चेति ताल प्राणम् दश स्मृतः।।

अर्थात् काल, मार्ग, क्रिया, अंग, ग्रह, जाति, कला, लय, यति तथा प्रस्तार ताल के दस प्राण कहे गए हैं।

<u>काल</u> – गायन, वादन या नृत्य के प्रस्तुतीकरण में जितना समय लगता है वह काल कहलाता है। इसे नापने के लिए मात्रा, विभाग व ताल की सृजना होती है।

मार्ग – जिस रीति से ताल पहली मात्रा से अंतिम मात्रा तक चलती है वह मार्ग कहलाती है। इसमें यह ध्यान रखा जाता है कि मात्रा तथा ताल के विभिन्न विभागों का परिमाण कितना है। भरत मुनि ने तीन मार्ग बताए हैं–चित्र, वार्तिक तथा दक्षिण परंतु पं0 शार्ङ्गदेव ने चार मार्ग माने हैं– ध्रुव, चित्र, वार्तिक तथा दक्षिण।

<u>क्रिया</u> – ताल, विभाग व मात्रा आदि को प्रदर्शित करने के लिए हाथों से विभिन्न प्रकार के आघात व संकेत, क्रिया कहलाती है। इसके दो भेद बताए गए हैं – सशब्द क्रिया व निःशब्द क्रिया। हाथों द्वारा की जाने वाली जिस क्रिया को प्रकट करने में शब्द अर्थात् ध्वनि उत्पन्न हो वह सशब्द क्रिया कहलाती है तथा जिस क्रिया को प्रकट करने में शब्द अर्थात् ध्वनि उत्पन्न नहीं होती वह निःशब्द क्रिया कहलाती है। पं0 शाङ्र्गदेव ने सशब्द व निःशब्द दोनों क्रियाओं के चार–चार भेद माने हैं। चार सशब्द क्रियाएं–ध्रुव, शम्पा, ताल व सन्निपात हैं। निःशब्द क्रिया के चार भेद– आवाप, निष्क्राम, विक्षेप व प्रवेश हैं।

<u>अंग</u> – ताल के स्वरूप को स्थापित करने के लिए विभाग बनाए जाते हैं, इन्हें ताल के अंग कहा जाता है। इसके छः भेद हैं–अणुद्रुत, द्रुत, लघु, गुरु, प्लुत तथा काकपद।

<u>ग्रह</u> – जिस मात्रा से ताल आरम्भ होती है उसे ग्रह कहते हैं। इसे दो प्रकार से प्रदर्शित किया जाता है–सम ग्रह तथा विषम ग्रह। जब प्रथम मात्रा को निश्चित स्थान पर ही प्रदर्शित किया जाता है तब वह सम ग्रह कहा जाता है। परंतु जब उसे निश्चित स्थान से इतर प्रदर्शित किया जाता है तब वही विषम ग्रह कहलाता है। विषम ग्रह के दो भेद हैं– अनागत व अतीत ग्रह।

<u>जाति</u> – तालों के विभागों की मात्रा संख्या बदलने से ताल का वजन बदल जाता है जिससे विभिन्न जातियां बनती हैं। पं0 शार्ङ्गदेव ने जाति के पांच भेद बताए हैं–तिस्र, चतस्र, मिश्र, खण्ड व संकीर्ण।

<u>कला</u> – अक्षरकाल का सूक्ष्म विभाजन कला कहलाता है। यदि एक अक्षर काल में एक ही स्वर गाया जाएगा तो उसे एक कला कहा जाएगा, दो स्वर गाए जाएंगे तो दो कला व चार स्वर गाए जाएं तो चार कला कहलाएंगी। एक कला में कितने वर्ण प्रयोग किए जाते हैं इससे ताल की जाति निर्धारित होती है।

<u>लय</u> – दो क्रियाओं के मध्य विश्रांति लय कहलाती है। इसके तीन भेद हैं–विलम्बित लय, मध्य लय तथा द्रुत लय।

<u>यति</u> – लय के नापने का ठंग या रीति यति कहलाती है। इसके पांच भेद हैं–समा, स्रोतोगता, मृदंगा, पिपीलिका तथा गोपुच्छा।

<u>प्रस्तार</u> – विभिन्न टुकड़ों, परन, रेला आदि की सहायता से ताल का विस्तार करना ही प्रस्तार कहा जाता है।

ये ताल के दस प्राण सभी तालों में परिलक्षित होते हैं। भारतीय संगीत में इन दस प्राणों से युक्त अनेकों तालें प्रचलित रही हैं तथा आधुनिक काल में भी ये दस प्राण समस्त तालों में दिखाई देते हैं। उत्तर भारतीय संगीत में प्रचलित कुछ तालों के नाम इस प्रकार हैं–ब्रह्म ताल, लक्ष्मी ताल, रुद्र ताल, विष्णु ताल, एकताल, तीनताल या त्रिताल, चारताल या चौताल, धमार ताल, झपताल, रूपक ताल, तिलवाड़ा ताल, झूमरा ताल, आड़ाचार ताल, दीपचंदी ताल, जत ताल, कहरवा ताल, दादरा ताल, आदि।

वाद्य वर्गीकरण – प्राचीन काल में भरत मुनि ने सांगीतिक वाद्यों को वर्गीकृत करने की रीति का उल्लेख किया है। उन्होंने सांगीतिक वाद्यों को उनके ध्वनि–विज्ञान, प्रयोजन व वाद्यों को बनाने में प्रयुक्त सामग्री के आधार पर चार प्रकार से वर्गीकृत किया है–तत्, वितत्, घन व सुषिर वाद्य।

तत् वाद्य – ऐसे वाद्य जिनमें ध्वनि उत्पादन तंतु अर्थात् तार के माध्यम से होता है वे तत् वाद्य कहलाते हैं। इन वाद्यों का प्रयोजन संगीत के स्वरों को उत्पन्न करना है। उदाहरणार्थ–वीणा, सरोद, सितार, तानपूरा, सारंगी, वॉयलिन आदि।

वितत् वाद्य – ऐसे वाद्य जिन्हें बनाने के लिए चर्म या चमड़े का प्रयोग किया जाता है अर्थात् जिनपर चर्म मढ़ा जाता है तथा उसी चर्म पर प्रहार करके ध्वनि उत्पन्न की जाती है वे वितत् वाद्य कहलाते हैं। इन वाद्यों को अवनद्ध वाद्य भी कहा जाता है। इन पर ताल व लय प्रदर्शित की जाती है। उदाहरणार्थ–मृदंग, पखावज, पणव, पुष्करवाद्य, तबला, ढोल, आदि।

घन वाद्य – ऐसे वाद्य जो प्रस्तर(मिट्टी या पत्थर), धातु, या लकड़ी से बनाए जाते हैं व जिन पर मात्र लय प्रदर्शित की जाती है वे घन वाद्य कहलाते हैं। इन वाद्यों पर ध्वनि उत्पादन के लिए प्रस्तर(मिट्टी या पत्थर), धातु या लकड़ी की दो सतहों को परस्पर टकराया जाता है परंतु इस प्रकार का ध्वनि उत्पादन स्वर के लिए न हो कर लय मात्र के लिए किया जाता है। उदाहरण स्वरूप–घुंघरू, करताल, घण्टा, झांज, मंजीरा, चिमटा, घड़ियाल, आदि।

सुषिर वाद्य – इन वाद्यों में ध्वनि उत्पादन वायु के माध्यम से किया जाता है। इन वाद्यों में छिद्र होते हैं जिनसे सांगीतिक स्वर उत्पन्न किए जाते हैं। तत् वाद्यों की भांति ये वाद्य भी स्वरलहरियां उत्पन्न करने के लिए प्रयुक्त होते हैं। इन वाद्यों के उदाहरणों में–शंख, वेणु(बांसुरी), भेरी, शहनाई, नादस्वरम्, मशकबीन, बीन, आदि हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. सामगान पर टिप्पणी कीजिए।
2. भारतीय संगीत में ग्राम व उसके भेदों को स्पष्ट करते हुए उसके महत्व पर प्रकाश डालिए।
3. भरत मुनि के वाद्य वर्गीकरण को उदाहरण सहित समझाइए।
4. ताल पर टिप्पणी कीजिए।
5. ध्रुवपद व धमार की तुलना कीजिए।
6. ख्याल व ठुमरी में समानता व विभिन्नता का उल्लेख कीजिए।
7. निम्नलिखित दक्षिण भारतीय संगीत में प्रचलित गीत शैलियों में से किन्हीं दो को समझाइएः–
   पदम्, कृति, कीर्तनम्, जावली, तिल्लाना, राग मालिका
8. निम्नलिखित में से किन्हीं चार पर टिप्पणी कीजिएः–
   बंदिश, मुखड़ा, वाग्गेयकार, स्वर मालिका, लक्षण गीत, वृन्द, अष्टक, युगलबंदी
9. निम्नलिखित में से किन्हीं छः पर टिप्पणी कीजिए–
   सम, मींड, खटका, मुर्की, आंदोलन, आलाप, संगतकार, गायक, नायक, सप्तक

1.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप भारतीय संगीत के इतिहास (प्राचीनकाल से मध्यकाल तक) के विषय में जान चुके होंगे। प्राग्ऐतिहासिक काल से ही भारतीय संगीत के विकास के प्रमाण प्राप्त होने लगते हैं। परंतु इस काल खण्ड में साम या सामगान को संगीत का पर्याय माना गया है। इसी काल में भारतीय संगीत में एक से दो, दो से तीन, तीन से चार व इसी क्रम में सात स्वरों तक सप्तक के विकास के प्रमाण वेदों में प्राप्त हो जाते हैं। परंतु वेदों में संगीत के अन्य तत्वों–नाद, श्रुति, सप्तक, ग्राम, मूर्छना आदि का कोई वर्णन प्राप्त नहीं होता। वेदों के पश्चात् रामायण व महाभारत महाकाव्यों में भी नाद, श्रुति व सप्तक का वर्णन नहीं किया गया है परंतु वहां ग्राम, मूर्छना व ग्रामरागों से सम्बंधित विवरण प्राप्त

हो जाते हैं। इससे ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज को श्रुति का भान था परंतु रामायण व महाभारत ग्रंथ मानवीय चरित्रों पर आधारित हैं इसलिए इनमें सांगीतिक तत्वों पर विशद् चर्चा नहीं की गई है।

प्राग्ऐतिहासिक काल के ग्रंथों के उल्लेखों से तत्कालीन संगीत विशेषज्ञ विभूतियों के विषय में भी ज्ञात होता है। इस सम्पूर्ण काल खण्ड में गंधर्वों, अप्सराओं तथा किन्नरों के वर्णन प्राप्त होते हैं। ये सभी संगीत जीवी समुदाय के अंग थे। संगीत विद्या को गन्धर्वों की विद्या कहा गया है। इसीलिए प्राग्ऐतिहासिक काल में संगीत को *गान्धर्व* भी कहा गया है। आर्यों के अनेक प्राचीन ग्रंथों में वर्णित है कि भगवान ब्रह्मा ने संगीत के सप्त स्वरों की सृजना की। कालान्तर में इन्हीं सप्त स्वरों के आधार पर भगवान शिव ने अपने पांच मुखों से पांच रागों की तथा भगवती पार्वती ने एक राग की उत्पत्ति की। इस प्रकार प्रारम्भ में संगीत छः राग उत्पन्न हुए। इस काल के ग्रंथों में वर्णित है कि भगवती सरस्वती तथा नारद मुनि ने भगवान शिव से संगीत की शिक्षा प्राप्त की। तत्पश्चात् भगवान शिव से आज्ञा प्राप्त कर ऋषि नारद ने संगीत की शिक्षा गन्धर्वों को दी। इन्हीं गन्धर्वों में से एक गंधर्व नारद ने मानव जाति के हित के लिए इस विद्या का प्रचार–प्रसार मत्यु लोक अर्थात् पृथ्वी पर किया। इस प्रकार संगीत के आदि गुरु भगवान शिव माने जाते हैं तथा नारद मृत्यु लोक में संगीत के प्रथम आचार्य माने गए हैं। इसी प्रकार भगवती सरस्वती को संगीत व विद्या की अधिष्ठात्री देवी माना जाता है। प्राचीन भारतीय संगीत के दैवीय संगीतज्ञों में तुम्बरु व विश्वावसु नामक गंधर्वों का नाम भी श्रद्धा से लिया गया है। इनके अतिरिक्त महाकाव्य काल के संगीतज्ञों में रावण, हनुमान, लव–कुश, कृष्ण व अर्जुन का नाम भी विशेष उल्लेखनीय हैं।

प्राग्ऐतिहासिक काल के ग्रंथों में अनेक प्रकार के वाद्यों के वर्णन भी प्राप्त होते हैं। इनमें से ताल वाद्यों में आदिम वाद्य भूमि दुंदुभि को माना गया है। ताल वाद्यों में विभिन्न प्रकार के पुष्कर वाद्य, पणव वाद्य तथा विभिन्न प्रकार की दुंदुभियों के वर्णन इस काल के ग्रंथों में प्राप्त होते हैं। तंतु वाद्यों में बाण नामक वाद्य सर्वाधिक प्राचीन वाद्य है। बाद में प्रचलित हुए सभी प्रकार के तंतु वाद्यों को बाण नामक वाद्य से ही प्रेरित मानकर वीणा कहा गया। प्राग्ऐतिहासिक काल में अनेक प्रकार की वीणाएं प्रचलित थीं, उदाहरणार्थ– एकतंत्री, विपंची, मत्तकोकिला, महती, तुबरु आदि। इस काल में शंख व वेणु वाद्यों के भी उल्लेख प्राप्त होते हैं। प्राग्ऐतिहासिक काल के नृत्त प्रकारों में तांडव, लास्य, रास, हल्लीसक आदि प्रमुख रहे हैं। सांगीतिक उद्धरणों के दृष्टिकोण से ऐतिहासिक काल, प्राग्ऐतिहासिक काल की तुलना में समृद्ध दिखता है। इस काल में स्पष्ट रूप से संगीत पर ही आधारित ग्रंथों की रचना प्रारम्भ हो चुकी थी। इस काल में समस्त सांगीतिक तत्वों के उल्लेख व व्याख्या प्राप्त हो जाती है। यह युग संगीत के लिए निर्णायक युग कहा जा सकता है क्योंकि इस युग में सांगीतिक तत्वों की जो व्याख्याएं प्रस्तुत की गईं वही व्याख्याएं आधुनिक काल में भी स्वीकारी गई हैं। यहां तक कि ऐतिहासिक युग के प्राचीन व मध्य काल में भारतीय संगीत का जो विकास हुआ, आधुनिक काल में सूक्ष्म परिवर्तन के साथ ही वह विद्यमान है।

प्राचीन व मध्य काल भारतीय संगीत के दृष्टिकोण से स्वर्णिम युग है। इस युग में जहां पं0 शार्ङ्गदेव, पं0 अहोबल, रामामात्य, पं0 व्यंकटमुखी, पं0 लोचन, पं0 सोमनाथ, महाराण कुम्भा, महाराजा मानसिंह तोमर, आदि जैसे अनेक अति उच्च कोटि के सांगीतिक शास्त्रकार हुए वहीं इसी युग में नायक गोपाल, स्वामी हरिदास, बैजू बावरा, महारानी गुर्जरी, तानसेन, गोपाल लाल, त्यागराजा, स्वाति तिरुनल, श्यामा शास्त्री, सूरदास, मीराबाई, मुत्थुस्वामी दीक्षितर, पुरंदरदास, आदि जैसे अनेक उत्कृष्ट संगीतज्ञ हुए हैं। भारतीय संगीत की प्रसिद्ध गीत शैलियां प्रबन्ध, ध्रुवपद, धमार, ख्याल, चतुरंग, तराना, सादरा आदि भी इसी युग की देन हैं। विश्व प्रसिद्ध भारतीय ताल वाद्य तबला तथा तंतु वाद्य सितार भी तथा विश्व प्रसिद्ध भरतनाट्यम्, कथकली व कथक नृत्य भी इसी युग की देन हैं।

1.6 शब्दावली

1. बंदिश – सांगीतिक भाषा में गीत को बंदिश कहा जाता है। यह सांगीतिक रचना में प्रयुक्त होने वाला कवित्त भाग ही है परंतु यह स्वरमय होता है। संगीत में गीत शैलियों के आधार पर अनेक प्रकार की बंदिशें होती हैं, जैसे– ध्रुवपद, धमार, ख्याल, तराना, ठुमरी, भजन, ग़ज़ल, आदि की बंदिश।

2. सप्तक – सात स्वरों का समूह सप्तक कहलाता है। इस समूह में सात स्वर क्रमपूर्वक नियोजित किए जाते हैं, यथा – सा रे गा म प ध नि। भारतीय संगीत में तीन सप्तक स्वीकार किए गए हैं–तार सप्तक, मध्य सप्तक तथा मन्द्र सप्तक। तार सप्तक मध्य सप्तक से दोगुना ऊंचे स्थान पर स्थित होता है। इसी प्रकार मध्य सप्तक मन्द्र सप्तक से ऊंचे स्थान पर स्थित होता है।

3. अष्टक – सात स्वरों में तार सप्तक का प्रथम स्वर सम्मिलित करके उनकी संख्या आठ मान ली जाती है। इस प्रकार का सप्तक, अष्टक कहलाता है। प्रायोगिक संगीत में सप्तक इसी रूप में प्रस्तुत किया जाता है– सा रे गा म प ध नि सां।

4. नायक – प्राचीन परम्पराओं में प्रचलित बंदिशों को बिना किसी बदलाव के प्रस्तुत करने वाला कलाकार नायक कहलाता है। नायक, अपने कला कौशल पर नियंत्रण रखते हुए गुरु–शिष्य परंपरा से सीखी बंदिशों को यथावत् प्रस्तुत करने वाला कलाकार होता है।

5. गायक – गुरु–शिष्य परंपरा से सीखी बंदिशों व गायन शैली को, अपने कला–कौशल से पुष्ट कर व सजा कर प्रस्तुत करने वाला कलाकार गायक कहलाता है। गायक सृजनात्मक शक्ति का धनी होता है। अनेक अवसरों पर वह अपने पूर्वाचार्यों से श्रेष्ठ सिद्ध होता है।

6. वाग्गेयकार – वाग्गेयकार ऐसा कलाकार है जिसने शब्द रचना व सांगीतिक स्वर रचना दोनों में दक्षता प्राप्त की हो। तात्पर्य यह कि ऐसा कलाकार जो बंदिश के कवित्त भाग की रचना करने, उसे किसी राग के स्वरों में निबद्ध करने तथा उन्हें गाने की भी क्षमता रखता है, वह वाग्गेयकार कहलाता है।

7. सम – प्रत्येक ताल की प्रथम मात्रा सम कहलाती है। इसे ताली द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।

8. खाली व ताली – जिस ताल में अधिक विभाग होते हैं उसके विभागों को पहचानने के लिए, कुछ विभागों को सशब्द क्रिया व कुछ को निःशब्द क्रिया द्वारा व्यक्त किया जाता है। जिन विभागों को निःशब्द क्रिया द्वारा व्यक्त किया जाता है वे खाली कहलाते हैं तथा जिन विभागों को सशब्द क्रिया द्वारा व्यक्त किया जाता है वे ताली द्वारा प्रदर्शित किए जाते हैं।

9. मुखड़ा – बंदिश या ताल में सम को प्रदिर्शित करने से पहले जिस भाग या टुकड़े का गायन या वादन किया जाता है वह मुखड़ा कहलाता है।

10. आलाप – राग के नियमों को ध्यान में रख कर उसके स्वरों का विलम्बित लय में गायन करना आलाप करना कहलाता है। इसे ही राग का स्वर–प्रस्तार या राग विस्तार भी कहते हैं। आलाप करते हुए राग के आरोह–अवरोह, न्सास के स्वर, वादी–संवादी स्वर, महत्वपूर्ण स्वर–संगतियों आदि राग सूचक स्वर समूहों का ध्यान रखा जाता है।

11. तान – राग के आरोह–अवरोह व स्वरूप को ध्यान में रख कर उसके स्वरों का मध्य लय या द्रुत लय में प्रस्तार करना तान करना कहलाता है।

12. मुर्की – किसी स्वर को आधार मानकर उसके आगे व पीछे के स्वरों को अतिद्रुत लय में मात्र छूकर मूल स्वर का गान करना, मुर्की कहलाता है।

13. खटका – किसी स्वर का गान करते हुए झटका देकर अगले स्वर का गान करना, खटका कहलाता है।

14. मींड – एक स्वर से दूसरे स्वर पर बिना स्वर भंग किए जाना या उच्चारित करना मींड कहलाता है।

15. आंदोलन – किसी स्वर को उत्पन्न करके उसके आगे व पीछे के स्वरों को धीर–गम्भीर लय में झुलाते हुए उच्चरित करना व मूल स्वर पर लौटना, आंदोलन कहलाता है।

16. जुगलबंदी या युगलबंदी – जब दो कलाकार मिलकर कोई सांगीतिक रचना प्रस्तुत करते हैं तब उनकी वह प्रस्तुति जुगलबंदी या युगलबंदी कहलाती है। आधुनिक कालीन भारतीय संगीत में गायन, वादन तथा नृत्य तीनों विधाओं में युगलबंदी की प्रथा प्रचलित है। यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि संगीत की ऐसी प्रस्तुतियों में युगलबंदी कर रहे दोनों कलाकार मुख्य भूमिका का निर्वहन कर रहे होते हैं तथा उनके साथ मंच पर प्रस्तुति दे रहे कलाकार उनकी मात्र संगत करते हैं।

17. संगतकार – सांगीतिक प्रस्तुति में मंच पर आसीन मुख्य कलाकार का अनुसरण करने वाले अन्य कलाकार, संगतकर्ता कहलाते हैं।

18. वृन्द – वृन्द का शाब्दिक अर्थ है समूह। संगीत की सामूहिक प्रस्तुति को वृन्द कहा जाता है। यह तीन प्रकार का होता है–गान वृन्द, वाद्य वृन्द व नृत्त वृन्द। जब दो से अधिक गायक एक साथ मिलकर गायन प्रस्तुत करते हैं वह गान वृन्द या वृन्दगान कहलाता है। जब दो से अधिक वाद्य वादक एक साथ मिलकर वादन प्रस्तुत करते हैं तब वह वाद्य वृन्द कहलाता है। भरत मुनि ने वाद्य वृन्द के लिए ही कुतुप संज्ञा दी है। जब दो से अधिक नर्तक एक साथ मिलकर नर्तन प्रस्तुत करते हैं तब वह नृत्त वृन्द कहलाता है।

1.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. परांजपे, डा0 शरच्चन्द्र श्रीधर, 1994, भारतीय संगीत का इतिहास, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2. सिंह, डॉ0 ठाकुर जयदेव, 1994, भारतीय संगीत का इतिहास, संगीत रिसर्च एकेडेमी, कलकत्ता।
3. डंगवाल, मनीष, 2005, नारदीय शिक्षा में संगीत, राज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
4. शर्मा, भगवत शरण, 1988, संगीत ग्रंथ सार, सखि प्रकाशन, गोटावाला कोठी, हाथरस।
5. वसंत, 2007, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।
6. भातखण्डे, पं0 विष्णुनारायण, 1982,संगीत–पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन, संगीत कार्यालय, हाथरस।
7. शास्त्री, बाबूलाल शुक्ल(अनु0),2000, श्रीभरतमुनिप्रणीत नाट्यशास्त्र, चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।
8. गोवर्धन, शान्ति, 1993 व 2007, संगीत शास्त्र दर्पण, पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
9. Sastri, ed. S. Subrahmanya, 1992, Samgitaratnakara of Sarngadeva, The Adyar Library and Research Centre, Madras.
10. Sharma, ed. Prem Lata, 1992, Brhaddesi of Sri Matanga Muni, Indira Gandhi National Centre for The Arts, New Delhi.
11. Nagar, ed. R. S., 2009, Natyasastra of Bharatmuni, Parimal Publications, Delhi.
12. Kavi, ed. M. Ramakrishna, 1980, Natyasastra of Bharatamuni, Oriental Institute, Baroda.

1.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. परांजपे, शरच्चंद्र श्रीधर, संगीत बोध, म0प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
2. बृहस्पति, कैलाश चन्द्रदेव, भरत का संगीत सिद्धांत, उ0प्र0 हिन्दी संस्थान, लखनऊ।
3. विजयलक्ष्मी, डॉ0 एम0, संगीत निबन्धमाला, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. भातखण्डे, पं0 वि0डी0, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 1 से 6, संगीत कार्यालय, हाथरस।
5. ठाकुर, पं0 ओंकारनाथ, संगीतांजलि भाग 1 से 6, प्रणव स्मृति न्यास, वाराणसी।

1.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. प्राचीन कालीन इतिहास को समझाइये।
2. नारदीय शिक्षा या नाट्यशास्त्र में वर्णित संगीत पर निबंध लिखिए।
3. मतंग मुनि अथवा पं0 शार्ङ्गदेव के भारतीय संगीत में योगदान पर टिप्पणी कीजिए।
4. भारतीय संगीत में ग्राम किसे कहते हैं तथा ग्राम कितने प्रकार के हैं?
5. मूर्च्छना व उसके प्रकारों पर टिप्पणी कीजिए।

इकाई 2 – नाद, ग्राम, मूर्च्छना, जाति गायन, निबद्ध गान, अनिबद्ध गान, शुद्ध राग, छायालग राग, संकीर्ण राग, पूर्वान्गवादि राग, उतरान्गवादि राग, परमेल प्रवेशक राग, संधि प्रकाश राग

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 भारतीय शास्त्रीय संगीत के पारिभाषिक शब्द
2.3.1 नाद
2.3.2 ग्राम
2.3.3 मूर्च्छना
2.3.4 जाति गायन
2.3.5 निबद्ध गान
2.3.6 अनिबद्ध गान
2.3.7 शुद्ध राग
2.3.8 छायालग राग
2.3.9 संकीर्ण राग
2.3.10 पूर्वान्गवादि राग
2.3.11 उतरान्गवादि राग
2.3.12 परमेल प्रवेशक राग
2.3.13 संधि प्रकाश राग
2.4 सारांश
2.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.7 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0वी0एन0–202 के प्रथम खण्ड की दूसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के पश्चात् आप भारतीय संगीत के इतिहास से परिचित हो चुके होंगे।

इस इकाई में भारतीय शास्त्रीय संगीत के पारिभाषिक शब्दों जैसे नाद, ग्राम, मूर्च्छना, जाति गायन, निबद्ध गान, अनिबद्ध गान, शुद्ध राग, छायालग राग, संकीर्ण राग, पूर्वान्गवादिराग,उतरान्गवादि राग, परमेल प्रवेशक राग, संधि प्रकाश राग को विस्तार से समझाया गया है। इन शब्दावलियों के माध्यम से हमें संगीत के शास्त्र एवं क्रियात्मक पक्ष को समझ पाने में सरलता होगी।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप भारतीय शास्त्रीय संगीत के पारिभाषिक शब्दों जैसे नाद, ग्राम, मूर्च्छना, जाति गायन, निबद्ध गान, अनिबद्ध गान, शुद्ध राग, छायालग राग, संकीर्ण राग, पूर्वान्गवादिराग, उतरान्गवादि राग, परमेल प्रवेशक राग, संधि प्रकाश राग को समझ चुके होंगे। इन शब्दों को समझने के पश्चात आपको संगीत के शास्त्र एवं क्रियात्मक पक्ष को समझ पाने में आसानी होगी।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

- भारतीय शास्त्रीय संगीत के पारिभाषिक शब्दों को समझ सकेंगे।
- संगीत के शास्त्र एवं क्रियात्मक पक्ष को समझ पाने में आसानी होगी।
- इन मूलभूत शब्दों व इनके अन्तर को समझ कर, अपने गायन अथवा वादन में इनका सही प्रयोग कर सकेंगे।

2.3 भारतीय शास्त्रीय संगीत के पारिभाषिक शब्द

2.3.1 नाद – संगीतोपयोगी ध्वनि को 'नाद' कहते हैं। संगीत शास्त्रियों ने नाद को 'ब्रह्म' की संज्ञा दी है। नाद से ही संगीत के मूल आधार 'स्वर' की उत्पत्ति मानी गयी है। संगीत की मूल सम्पत्ति नाद को ही माना गया है। साधारणतया हम देखते हैं कि किसी भी वस्तु से ध्वनि तभी उत्पन्न होती है, जबकि उसमें किसी प्रकार का कम्पन्न या आन्दोलन होगा। यदि ये कम्पन्न या आन्दोलन नियमित रूप से हो, तब इससे उत्पन्न ध्वनि का उपयोग संगीत के लिए किया जा सकता है। परन्तु सभी प्रकार के आन्दोलनों से उत्पन्न ध्वनि संगीत के लिए कभी उपयोगी नहीं हो सकती हैं तथा जो ध्वनि संगीत हेतु महत्वपूर्ण या उपयोगी न हो, उसे हम शोर या कोलाहल की संज्ञा दे सकते हैं। नाद से ही स्वर की उत्पत्ति मानी गयी है।

एक निश्चित गति तथा नियमित रूप से आन्दोलित ध्वनि, संगीतोपयोगी ध्वनि सिद्ध हो सकती है। नाद की निम्नलिखित मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं :–

1. **नाद का ऊँचा नीचापन** – उदाहरणार्थ हम दो भिन्न–भिन्न नादों में ऊँचापन तथा नीचापन अंकन करेंगे। जिस नाद की कंपन संख्या कम होगी उसे हम 'नीचा नाद' कहेंगे तथा जिस नाद की कंपन–संख्या अधिक होगी उसे हम ऊँचा नाद कहेंगे। अर्थात यदि एक स्वर (नाद) की कंपन संख्या 100 आन्दोलन प्रति सेकेन्ड है तथा दूसरे स्वर (नाद) की कम्पन संख्या 150 आन्दोलन प्रति सेकेन्ड होगी तो हमें ऐसा मान लेना चाहिये कि 100 आन्दोलन संख्या वाला नाद नीचा है तथा 150 आन्दोलन संख्या वाला नाद ऊँचा है। हम स्वरों के चढ़ते हुए क्रम तथा उतरते हुए क्रम से भी इसे भली भाँति समझ सकते हैं। उदाहरणार्थ – सा रे ग म प ध नी सां

अर्थात स्वरों के चढ़ते हुए क्रम में नाद हमेशा ऊँचा होता जाएगा तथा स्वरों के उतरते हुए क्रम में (अवरोहात्मक स्वरूप में) नाद सदैव नीचा होता जाएगा। जैसे – सां नी ध प म ग रे सा। यही नाद का ऊँचा–नीचापन है। उपरोक्त उदाहरण से आप भली–भाँति जान गए होंगे कि नाद की प्रथम विशेषता क्या है? नाद का ऊँचा नीचापन किसे कहते हैं?

2. **नाद का छोटा बड़ापन** – आप जानते होंगे कि यदि तानपुरे या सितार के तार को हम धीमे से छेड़ते हैं तो उसमें से बहुत बारीक, हल्की तथा समीप तक सुनायी देने वाली ध्वनि सुनायी देती है। इसके विपरीत यदि हम तानपुरे या सितार के तार को जोर से छेड़ते हैं तो उसमें से तेज ध्वनि तथा अधिक दूरी तक सुनायी देने वाली ध्वनि निकलती है। यही नाद का छोटा–बड़ापन कहलाता है। जो नाद(ध्वनि) कम दूरी तक सुनाई देगा, वह छोटा नाद कहलाएगा तथा नाद(ध्वनि) अधिक दूरी तक सुनायी देगा वह बड़ा नाद कहलाएगा। अब आप परिचित हो चुके होंगे कि नाद का छोटा या बड़ापन क्या होता है?

3. **नाद की जाति एवं गुण** – सम्भवतया आप परिचित होंगे कि प्रत्येक नाद की अपनी एक पृथक जाति, गुण अथवा विशेषता होती है। हम अनुभव करते हैं कि तानपुरे की ध्वनि सितार से भिन्न होती है। वायलिन की ध्वनि सरोद से भिन्न होती है, आदि–आदि। हम किसी भी वाद्य की ध्वनि को सुनते ही जान जाते हैं कि अमुक ध्वनि किस वाद्य से उत्पन्न हुई है। हम जिस विशेषता के कारण, बिना देखे ही, सुनने मात्र से पहचान जाते हैं कि यह ध्वनि किस वस्तु से अथवा किस वाद्य से उत्पन्न हो रही है, उस विशेषता को ही नाद की जाति एवं गुण कहते हैं।

उपरोक्त से आप भली भाँति समझ गये होंगे कि नाद की जाति एवं गुण क्या–क्या हैं? इसके अतिरिक्त नाद का काल भी महत्वपूर्ण विषय है। आप जानते होंगे कि संगीत में प्रयोग किए जाने वाले प्रत्येक नाद का काल निश्चित होता है। नाद के काल के आधार पर ही माप कर संगीत में विभिन्न लय बनायी जाती हैं। संगीत शास्त्र में एक मात्रा से दूसरी मात्रा तक के काल को नाद का काल कहा गया है।

उपरोक्त विशेषताओं के अध्ययन से आप भली प्रकार जान गए होंगे कि नाद क्या है? संगीत में नाद का क्या महत्व है? नाद की मूलभूत विशेषताएं कौन–कौन सी हैं?

सर्वप्रथम मतंग ने 'बृहद्देशी' नामक ग्रन्थ में नाद के विषय की विवेचना की है तथा कहा है कि –

ना नादेन बिना गीतं, न नादेन बिना स्वराः।
ना नादेन बिना नृतं, तस्मान्नादात्मकं जगत ।।

अर्थात नाद के बिना न गीत संभव है न ही स्वर और न ही नृत्य संभव है। अतः सारा संसार ही नादात्मक है।

मतंग के अनुसार नाद की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है कि – वास्तव में नाद और ध्वनि संगीत के उद्गम हैं। नाद शब्द जिन दो वर्णों से मिलकर बना है वह है– 'न' और 'द'। ग्रन्थों के अनुसार इनमें नकार 'प्राणत्व'(वायु) का द्योतक है और 'दकार' अग्नि तत्व का सूचक है। अतः प्राण और अग्नि के संयोग से जिसकी उत्पत्ति होती है, वही 'नाद' रूप है।

उपरोक्त कथनों से आप नाद से भली–भाँति परिचित हो गए होंगे कि नाद क्या है, ये किन दो वर्णों से मिलकर बना है इसकी उत्पत्ति किस प्रकार हुई है?

संगीत शास्त्रियों ने नाद तथा ब्रह्म की एकता को स्वीकार किया है। अतः संगीत–ग्रन्थों जैसे– संगीत रत्नाकर, संगीतराज, संगीत मकरन्द, आदि में नाद को ही ब्रह्म शब्द से सम्बोधित कर मंगलाचरण किया गया है। नाद का अर्थ अव्यक्त ध्वनि है।

अलंकार कौस्तुभ के द्वितीय स्तबक में बताया गया है कि नाभिदेश के उर्ध्व भाग में स्थित हृदयस्थान से ब्रह्मरन्धान्त में प्राणसंज्ञक वायु शब्द को उत्पन्न करता है। उसी शब्द को 'नाद' कहते हैं। भरत ने नाट्य शास्त्र में पारिभाषिक रूप से नाद का कुछ विशेष उल्लेख नहीं किया है किन्तु शब्द तत्व के दो रूपों का उल्लेख 'स्वरवान' और 'अभिधानवान' कहकर सांगीतिक शब्द के महत्व को स्वीकार किया है। स्वरवान का अर्थ है ऐसा शब्द जो अपने में पूर्ण हो। अभिधानवान का अर्थ है ऐसा शब्द जो किसी चीज या वस्तु विशेष का बोध कराए। अतः जितनी भी भाषाएं हैं वे सब अभिधानवान कही गयी हैं। इसे मतंग ने क्रमशः नादात्मक और वर्णनात्मक कहा है।

"नकारं प्राणनामानं नादोऽभिधीयते" – प्रस्तुत श्लोक द्वारा संगीतरत्नाकर नामक ग्रन्थ में नाद के अर्थ को स्पष्ट किया गया है। इस ग्रन्थ में नाद के प्रमुख दो भेदों(आहत तथा अनाहत नाद) का भी उल्लेख मिलता है तथा नाद के तीन गुण धर्म भी बतलाए हैं। मतंग के अनुसार नाद के सूक्ष्म, अतिसूक्ष्म, व्यक्त, अव्यक्त तथा कृत्रिम पाँच प्रकार माने गए हैं।

आहतोऽनाहतश्चेति द्विधा नादो निगद्यते।
सोऽयं प्रकाशते पिण्डे तस्मातपिण्डोऽभिधीयते।।

अर्थात संगीत रत्नाकर में नाद के दो रूप माने गए हैं – 1. आहत नाद 2. अनाहत नाद। आहत का अर्थ है आघात द्वारा। अतः जो नाद आघात करने से उत्पन्न होता है वह 'आहत नाद' कहलाता है तथा जो नाद बिना आघात के ही उत्पन्न होता है वह 'अनाहत नाद' कहलाता है। आहतनाद संगीतोपयोगी नाद कहलाता है इसके दो प्रकार कहे जा सकते हैं।

1. स्वाभाविक, जो कंठ से उत्पन्न हो।
2. यान्त्रिक, जो किसी कृत्रिम वस्तु के आघात या घर्षण द्वारा उत्पन्न हो। यह ध्वनि वाद्य संगीत में प्रयुक्त होती है, अर्थात तन्त्री वाद्यों के तार छेड़ने पर, अवनद्ध वाद्यों पर हाथ की थाप मारने पर या सुषिर वाद्यों में फूंक मारने पर यह नाद उत्पन्न होता है। संगीत का सम्बन्ध इसी नाद से होता है। मतंग के अनुसार ये पाँच प्रकार के होते हैं–सूक्ष्म, अतिसूक्ष्म, व्यक्त, अव्यक्त तथा कृत्रिम। जो क्रमशः गुह्रय, हृदय, कंठ, तालु तथा मुख से उत्पन्न होते हैं।

इस प्रकार आप जान गए होंगे कि आहत नाद ही संगीत में प्रयुक्त होने वाला नाद है। यदि हम व्यापक अर्थ में लें तो इसका यह अर्थ होगा कि किसी चीज के भी टकराने से जो ध्वनि उत्पन्न हो, वही आहत नाद है। बिना आघात के उत्पन्न होने वाला 'अनाहत नाद' केवल योगीजन ही सुनकर समझ सकते हैं तथा वे उसी के द्वारा मुक्ति प्राप्त करते हैं। मन तथा बुद्धि की साम्यावस्था की स्थिति में ही वह सुना जा सकता है। यौगिक क्रियाओं से मन, बुद्धि एक विशेष अवस्था में पहुँच जाते हैं, तभी अनाहत नाद ध्यानमग्न योगीजन को अनुभव होता है। केवल अनासक्त योगी ही साधना के पश्चात् अनाहत नाद को सुन सकता है अथवा अनुभव कर सकता है। स्पष्ट है कि जो ध्वनि निरन्तर बिना किसी आघात के शरीर के भीतर सुनायी दे, वही 'अनाहत नाद' कहलाता है।

आप भली–भाँति आहत तथा अनाहत नाद के विषय में परिचित हो गए होंगे। नाद कितने प्रकार के होते हैं? संगीत के लिए आहत तथा अनाहत दोनों नादों में से उपयोगी कौन सा नाद है, यह भी जान गए होंगे। आपको ज्ञात होना अति आवश्यक है कि तानपुरे से उत्पन्न वे नाद, जिनसे तारों को मिलाया जाता है, वे मूल नाद कहलाते हैं। इनके अतिरिक्त जो अन्य नाद मूलनाद की सहायता में उत्पन्न होते हैं वे "सहायक नाद" कहलाते हैं। सहायक नादों को 'स्वयंभू–स्वर' भी कहते हैं क्योंकि ये स्वतः ही पैदा होते हैं। विद्वानों के कथनानुसार प्रत्येक वाद्य में मूलनाद के अतिरिक्त कुछ अन्य सूक्ष्मनाद भी उत्पन्न होते हैं। जिन्हें सहायक नाद या "स्वयंभू स्वर" कहते हैं। स्वयंभू नादों को 'ओवरटोन्स' या "हारमोनिक्स" भी कहते हैं।

सहायक नादों की संख्या उनके उत्पन्न होने का क्रम तथा प्राबल्य प्रत्येक वाद्य प्रकार में एक–दूसरे से भिन्न होते हैं। जैसे तानपुरे के सहायक नाद वायलिन, सरोद, बांसुरी अथवा तबला से भिन्न होते हैं। सहायक नादों को ठीक से सुनने के लिए विशेष अनुभवी कर्णों की आवश्यकता होती है क्योंकि वे अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं। सहायक नाद मूलनाद से दुगुने, तिगुने, चौगुने, पंचगुने, छगुने, अर्थात वैज्ञानिक क्रम में मूल स्वर से 2 : 3 : 4 : 5 : 6 आदि के अनुपात से उत्पन्न होते हैं।

अब आपने जान गए होंगे कि मूल नादों के अतिरिक्त अन्य जो नाद होते हैं, उनको किस नाम से पुकारा जा सकता है? सहायक नाद किसे कहते हैं तथा उनकी उत्पत्ति वैज्ञानिक क्रम में मूल स्वर से कितने–कितने अनुपात से, उत्पन्न होती है? इस प्रकार ज्ञात होता है कि नाद की समस्त विशेषताओं की साधना निरन्तर अभ्यास द्वारा की जा सकती है। नाद की मधुरता के अभाव में संगीत नीरस तथा निर्जीव हो जाता है।

2.3.2 ग्राम – ग्राम का वास्तविक अर्थ है 'समूह'। प्राचीन संगीत में 'ग्राम' का प्रचलन था। संगीत में निश्चित श्रुत्यांतरों पर स्थापित सात स्वरों के समूह को ग्राम कहते थे। सात स्वरों के सप्तक को बाईस श्रुतियों पर भिन्न–भिन्न प्रकार से स्थापित करने को ग्राम कहते हैं। यदि हम "चतुश्चतुश्चतुश्चैव षडजमध्यमपंचम" के सिद्धान्त से बाईस श्रुतियों पर सात स्वरों की स्थापना करें तो एक ग्राम बन जाता है। अर्थात सात स्वरों को निश्चित श्रुतियों पर स्थापित करने को 'ग्राम' कहते हैं। नारदीय शिक्षा नामक ग्रन्थ में नारद ने तीन प्रकार के ग्रामों का उल्लेख किया है –
(1) षडज ग्राम (2) मध्यम ग्राम (3) गान्धार ग्राम।

भरत ने केवल षडज तथा मध्यम ग्राम का ही उल्लेख किया है। मतंग के अनुसार तीसरा ग्राम अर्थात गन्धार ग्राम स्वर्ग स्थित बताया गया है, जिसका आजकल लोप हो चुका है।

शारंगदेव के अनुसार ग्राम की व्याख्या इस प्रकार दी गयी है– 'ग्राम स्वर समूहः स्यान्मूर्च्छनाऽऽदेः समाश्रयः।' अर्थात ग्राम स्वरों का वह समूह है, जो मूर्च्छनाओं का आश्रय है।

उपरोक्त बातों से आप परिचित हो गए होंगे कि 'ग्राम' किसे कहते हैं, यह कितने प्रकार के होते हैं।

अब हम षडजग्राम की विवेचना करेंगे। यदि हम सप्तक के सात स्वरों को बाईस श्रुतियों पर इस प्रकार स्थापित करें कि सा–चौथी श्रुति पर, रे–सातवीं श्रुति पर, ग–नवीं श्रुति पर, म–13वीं श्रुति पर, प–सत्रहवीं श्रुति पर, ध–बीसवीं श्रुति पर तथा नि–बाइसवीं श्रुति पर हो, तो "षडज ग्राम" की स्थापना होगी।

षडज ग्राम के स्वरों में से यदि केवल पंचम स्वर की एक श्रुति कम पर स्थापित हो तो 'मध्यम ग्राम' बनेगा। मध्यम ग्राम की विशेषता होती है कि इसे मध्यम स्वर से ही प्रारम्भ किया जाता है। इस ग्राम में मध्यम स्वर को सा मानकर गाया बजाया जाता है। इसको सरल रूप में यदि कहा जाएगा तो ऐसा भी कह सकते हैं कि षडजग्राम का पंचम जो कि सत्रहवीं श्रुति पर है, उसे सोलहवीं श्रुति पर कर दिया जाए तो मध्यम ग्राम की स्थापना हो जाएगी। यदि मध्यम ग्राम को मध्यम स्वर से आरम्भ किया जाए तो श्रुतियों के अन्तर इस प्रकार होंगे– 2, 3, 4, 2, 3, 2, अर्थात् म में 4, प में 3, ध में 4, नि में 2, सा में 4, रे में 3 तथा ग में 2 श्रुतियां होंगी। उल्लेखनीय है कि मध्यम ग्राम का प्रचार प्राचीन काल में था, जो मध्यकाल में आकर प्रचार से हट गया है।

गन्धार ग्राम का लोप प्राचीनकाल से ही होने लगा था। विद्वानों के मतानुसार प्राचीन काल में निषाद ग्राम प्रचलित था जिसे गन्धर्व लोग गाया करते थे। बाद में इसी निषाद ग्राम का नाम गन्धार ग्राम पड़ा। आधुनिक काल में ऊपर वर्णित तीनों ग्रामों में से केवल षडज ग्राम ही प्रचार में है।

उपरोक्त अध्याय से आप भली–भाँति परिचित हो गए होंगे कि षडज ग्राम में सा को किस श्रुति पर स्थापित किया गया था, षडज ग्राम के स्वरों में से किस स्वर की एक श्रुति कम स्थापित की जाए जिससे मध्यम ग्राम बनेगा, गन्धार ग्राम किस समय में प्रचार में था तथा इसको कौन लोग गाया करते थे।

इस विवेचना से आप जान गए होंगे कि ग्राम क्या है तथा इसमें क्या–क्या विशेष है तथा ग्राम से ही मूर्च्छनाओं की उत्पत्ति हई है।

2.3.3 मूर्च्छना – निश्चित श्रुतियों के अन्तरों पर स्थापित सात स्वरों के समूह को ग्राम कहते हैं तथा ग्राम के किसी भी स्वर को आधार मानकर, उसके स्वरों पर क्रमिक, आरोह, अवरोह करने को "मूर्च्छना" कहते हैं। प्राचीन काल में ग्रामों से ही मूर्च्छनाओं की उत्पत्ति की जाती थी। एक ग्राम के सात स्वरों का बारी–बारी से प्रत्येक को षडज मानकर आरोह–अवरोह करने से विभिन्न मूर्च्छनाऐं बना करती थीं। उदाहरणार्थ, षडज ग्राम के प्रत्येक स्वर को एक–एक करके षडज माना जाए और फिर उसका आरोहावरोह किया जाए अर्थात् पहली मूर्च्छना षडज ग्राम से आरम्भ होकर आरोहवारोह करने पर षडज ग्राम के स्वरों की तरह होगी। प्राचीन ग्रन्थकारों ने स्वर को उसकी अन्तिम श्रुतियों पर स्थापित माना है। दूसरी मूर्च्छना मन्द निषाद को षडज मानकर आरोहावरोह करने से बनेगी। तीसरी मूर्च्छना मन्द्र धैवत को षडज मानकर आरोहावरोह करने पर बनेगी। इसी प्रकार क्रमशः मन्द्र पंचम, मध्यम, गन्धार, रिषभ स्वरों को सा मानकर आरोहावरोह करने पर अन्य मूर्च्छनाएं भी बनती जाएंगी। तीन ग्रामों से प्रत्येक सात–सात(अर्थात् 21) मूर्च्छनाएं बनती हैं।

चूँकि गन्धार ग्राम का लोप था अतः केवल (7+7=14) चौदह की मूर्च्छनाएं प्राचीन सिद्धान्तों के अनुसार मानी गयी हैं। रागों के स्थान पर प्राचीन समय में जातियां गायी जाती थीं और यह जातियां मूर्च्छनाओं से उत्पन्न होती थी। रागों का प्रचार बढ़ने से 'थाट' शब्द का बहुतायत से प्रयोग होने लगा, अब रागों की उत्पत्ति 'थाट' से मानी जाने लगी है। उपरोक्त वर्णन से मूर्च्छना किसे कहते हैं तथा पहली मूर्च्छना किस ग्राम से उत्पन्न होती है, आप भली–भाँति परिचित हो गए होंगे। आप जान गए होंगे कि षडज ग्राम के सातों स्वर 4, 3, 2, 4, 4, 3, 2, श्रुतियों की दूरी पर स्थित होते हैं। अतः पहली मूर्च्छना षडज से ही प्रारम्भ होगी। अतः इसके अनुसार चौथी पर सा, सातवीं पर रे, नवीं पर ग, तेरहवीं पर म, सत्रहवीं पर प, बीसवीं पर ध तथा बाईसवीं श्रुति पर नि आएगा।

अतः गन्धार व निषाद अपने पिछले स्वर रिषभ और धैवत से क्रमशः 2–2 श्रति ऊँचे होंगे। हम देखेंगे कि ये दोनों ही स्वर कोमल हो जाएंगे तथा यह मूर्च्छना काफी थाट के समान होगी। इसी प्रकार दूसरी मूर्च्छना में हम मन्द्र नि को सा मानकर षडज ग्राम के स्वरों पर क्रमिक आरोह–अवरोह करेंगे, तो ये सातों स्वर क्रमशः 2, 4, 3, 2, 4, 4 और 3 श्रुतियों के अन्तर पर होंगे। यह बिलावल थाट के समान ही होगा।

तीसरी मूर्च्छना में हम मन्द्र धैवत को सा मानेंगे व आरोह अवरोह करेंगे। इससे आपको ज्ञात होगा कि सातों स्वर 3, 2, 4, 3, 2, 4 और 4 श्रुतियों के अन्तर पर होंगे। अतः यहाँ पर रे कोमल तथा पंचम तीव्र मध्यम हो जायेगा। इस मूर्च्छना में रे ग ध व नि स्वर कोमल तथा दोनों मध्यम व पंचम वर्ज्य होने से यह मूर्च्छना किसी भी थाट के समान न होगी।

चौथी मूर्च्छना मन्द्र पंचम से प्रारम्भ होगी अतः इसके सातों स्वर 4, 3, 2, 4, 3, 2 और 4 श्रुतियों के अन्तर पर होंगे। यह मूर्च्छना आसावरी थाट के समान होगी क्योंकि इसके गन्धार धैवत व निषाद कोमल हो जाएंगे। इसी प्रकार आप जान जाएंगे, कि पाँचवीं मूर्च्छना मन्द्र के माध्यम से आरम्भ होने पर सातों स्वर क्रमशः 4, 4, 3, 2, 4, 3 व 2 श्रुतियों के अन्तर पर होंगे। इसमें केवल निषाद कोमल होगा यह मूर्च्छना खमाज थाट के समान मानी जाएगी।

छठी मूर्च्छना मन्द्र ग से शुरू होगी। उसके स्वर 2, 4, 4, 3, 2, 4, 3 श्रुतियों के अन्तर पर होंगे जो कि कल्याण थाट के समान प्रतीत होगा।

अन्त में हम देखेंगे कि सातवीं मूर्च्छना मन्द्र रिषभ से प्रारम्भ होगी। उसके सातों स्वर क्रमशः 3 2 4 4 3 2 तथा 4 श्रुतियों के अन्तर पर होने के कारण इसमें रे, ग ध, नि स्वर कोमल होंगे। यह मूर्च्छना उत्तर भारतीय भैरव थाट के समान होगी।

षडज ग्राम की मूर्च्छना से उत्तर भारतीय अलग–अलग थाटों की संरचना हुई है। इसी प्रकार मध्यम ग्राम की मूर्च्छनाएं भी ज्ञात की जा सकती हैं। मध्यम ग्राम से भी इसी प्रकार सात मूर्च्छनाएं बन सकती हैं।

आप उपरोक्त विवेचना से भली–भाँति जान गए होंगे कि भिन्न–भिन्न मूर्च्छनाओं को, भिन्न–भिन्न स्वरों से प्रारम्भ करने से विविध थाटों की उत्पत्ति भी होती जा रही है। आप यह जान चुके होंगे कि पहली मूर्च्छना षडज से प्रारम्भ होने पर क्रमशः स रे ग म प ध तथा नि स्वर कौन–कौन सी श्रुतियों पर स्थापित होंगे तथा यह मूर्च्छना किस थाट के समान होगी।

प्रस्तुत अध्याय के माध्यम से हमने मूर्च्छनाओं के विषय में ज्ञान प्राप्त किया है। मूर्च्छनाऐं हमें विभिन्न स्वर सप्तकों की प्राप्ति कराती हैं। प्रत्येक मूर्च्छना के आरम्भिक स्वर का वही महत्व एवं स्थान है, जो मेल सिद्धान्त में 'सा' का है। मूर्च्छना और मेल में एक प्रमुख अन्तर यह है कि जाति या रागों के नाम के आधार पर मूर्च्छना स्थिर नहीं की गयी, जबकि मेल (थाट) में यही व्यवस्था रही है।

उपरोक्त से आप मूर्च्छना के विषय में भली–भाँति परिचित हो गए होंगे।

<u>2.3.4 निबद्ध गान</u> – जो गायन ताल में पूरी तरह बद्ध हो, अर्थात ताल में बंधी हुई रचनाओं को निबद्ध गान कहते हैं। प्राचीन काल में निबद्ध गान के अन्तर्गत प्रबन्ध वस्तु, रूपक आदि गायनों का प्रकार प्रचलित होता था, परन्तु आधुनिक काल में निबद्ध गान के अन्तर्गत गीत के निम्नलिखित प्रकार, जिन्हें ताल में बाँधकर गाया–बजाया जाता है, वे निबन्ध गान के अन्तर्गत आते हैं।

<u>ख्याल</u> – ख्याल एक प्रकार का प्रसिद्ध निबद्ध गान है। 'ख्याल' जैसा कि आपको ज्ञात होगा कि यह उर्दू का शब्द है। इसका अर्थ है– 'कल्पना।' अर्थात यह गीत का वह प्रकार है जिसमें गायक गीत के बोलों को लेकर, उसमें कण, मुर्की, खटका, मींड, गमक, आलाप, तान का खुलकर सुन्दरतापूर्वक प्रयोग करता है। ख्याल मुख्यतः दो प्रकार के माने जाते हैं – (1) विलम्बित या बड़ा ख्याल (2) द्रुत या छोटा ख्याल। जो ख्याल धीमी–धीमी गति में गाया जाता है उसे बड़ा ख्याल या विलम्बित ख्याल कहते हैं तथा जो ख्याल तेज गति में गाए जाते हैं उन्हें द्रुत ख्याल या छोटा ख्याल कहते हैं। ख्याल मुख्यतः एकताल, तीनताल, झूमरा, तिलवाड़ा, आडा चारताल आदि तालों में निबद्ध करके गाए जाते हैं। जौनपुर के मुहम्मद हुसैन शर्की 'ख्याल' के आविष्कारक व प्रचारक माने जाते हैं। आप परिचित हो गए होंगे कि ख्याल का शाब्दिक अर्थ क्या है तथा ख्याल के मुख्य कौन–कौन से प्रकार हैं।

<u>ध्रुपद</u> – ध्रुपद के आविष्कारक(पन्द्रहवीं शताब्दी) ग्वालियर के राजा मान सिंह तोमर को माना जाता है। ध्रुपद एक मर्दाना निबद्ध गान है। प्राचीन काल में इसके चार भाग होते थे–स्थायी, अन्तरा, संचारी तथा आभोग। परन्तु आधुनिक काल में इसे दो भागों में ही गाने का प्रचलन है– स्थायी तथा अन्तरा। इस गायन शैली में तानों का प्रयोग नहीं किया जाता है तथा इसके स्थान पर प्रायः नोम्–तोम् का आलाप किया जाता है। ध्रुपद के लिए भारी आवाज वाले गायक विशेष रूप से उत्तम माने होते हैं। ध्रुपद के लिए चारताल अधिक उपयुक्त होती है। प्राचीन काल में ध्रुपद हेतु पखावज की संगत की जाती थी परन्तु आजकल पखावज का स्थान तबले ने ले लिया है। ध्रुपद एक गंभीर प्रकृति का गान है। ध्रुपद में विभिन्न लयकारियों का प्रयोग किया जाता है।

<u>धमार</u> – धमार की गायन शैली निबद्ध गान के अन्तर्गत आती है। इस गान में राधा–कृष्ण की होली का अधिकतर चित्रण मिलता है। धमार धमार ताल में गायी जाती है जिसमें चौदह मात्राएं होती हैं। इसमें ध्रुपद के ही समान अनेक लयकारियां दिखलायी जाती हैं। जैसे दुगुन, तिगुन, चौगुन, अठगुन आदि।

उपरोक्त वर्णन से आप भली प्रकार जान गए होंगे कि ध्रुपद तथा धमार में क्या–क्या विशेष है तथा क्या मुख्य अन्तर हैं।

<u>ठुमरी</u> – ठुमरी श्रृंगार रस की रचना है। यह भी एक प्रकार का निबद्ध गान कहलाता है। इसको टप्पे की तरह उन्हीं रागों में गाते हैं, जिनमें अन्य रागों का मिश्रण सरलता से हो सके। ठुमरी अधिकांशतः

जतताल, दीपचन्दी, तीनताल आदि तालों में गायी जाती है। ठुमरी गायन में अनेक प्रान्तों की छाया पड़ती है। बनारस, लखनऊ, महाराष्ट्र, पंजाब, दिल्ली आदि की ठुमरियां अत्यन्त प्रचलित होती हैं।

टप्पा – टप्पा के आविष्कारक शोरी मियां नामक संगीतज्ञ माने गए हैं। यह एक प्रकार का पंजाबी बोल वाला, निबद्ध गान है। इसकी तानें बहुत लम्बी, दानेदार अथवा पेंचदार होती हैं। इसे पीलू, काफी, भैरवी, खमाज आदि रागों में गाया जाता है। इसकी रचनाऐं श्रृंगाररस प्रधान होती हैं।

त्रिवट तथा चतुरंग – जब ताल में प्रयुक्त होने वाले बोलों को किसी राग के स्वरों पर, इच्छित ताल के साथ गाया जाता है। तो वह त्रिवट कहलाता है।

जब गीत के साहित्य की स्थायी में चार पंक्तियां हों और एक पंक्ति में साहित्य हो, दूसरी में सरगम हो, तीसरी में तराने के बोल तथा चौथी पंक्ति में तबले के पटाक्षर हों तो यह रचना चतुरंग कहलाती है।

तराना – तराना में तोम, नोम, तनन, देरे ना, दानी, दिर–दिर आदि निरर्थक शब्दों को गाया जाता है। किसी भी राग के छोटे ख्याल को गाने के बाद इसको, किसी भी ताल में निबद्ध करके गाया जाता है। इसमें विशेषकर तीनताल का प्रयोग होता है। प्रायः यह द्रुतलय के बाद धीरे–धीरे अतिद्रुतलय में गाया जाता है।

भजन – ईश स्तुति परक रचनाएं, जिन्हें तीनताल, कहरवा, दादरा, रूपक आदि ताल में गाया जाता है, भजन कहलाते हैं। भजन में आलाप, तान आदि का प्रयोग नहीं किया जाता है। आवश्यकतानुसार मींड, खटका, कण, मुर्की आदि का प्रयोग किया जाता है। यह एक निबद्ध गान है।

आप अच्छी तरह से जान गए होंगे कि निबद्ध गान किसे कहते हैं तथा इस गान के कितने प्रकार होते हैं।

2.3.5 अनिबद्ध गान – जो गायन बिना ताल के गाया अथवा बजाया जाता है अनिबद्ध–गान कहलाता है। प्राचीन काल में अनिबद्ध गान के प्रकार रागालाप, रूपकालाप, आलप्तिगान आदि प्रचलित थे। आधुनिक काल में राग में आलाप–गायन को अनिबद्ध गान कहा जाता है। अनिबद्ध–गान के मुख्य प्रकार निम्नलिखित हैं :–

रागालाप – प्राचीन काल में आलाप करने का यही एक ढंग होता था। यह अनिबद्ध गान कहा जाता था। रागालाप के द्वारा राग के प्रमुख इन दस लक्षणों ग्रह, अंश, न्यास, अल्पत्व, बहुत्व, षाडव, औडव, अपन्यास, मन्द्र व तार को दिखलाया जाता था।

रूपकालाप – प्राचीनकाल में आलाप करने का यह दूसरा प्रकार होता है। इसमें गायक, विभिन्न प्रकार से राग का विस्तार करके राग के स्वरूप को खींचता था। आधुनिक काल में गायन का यह अनिबद्ध प्रकार प्रचार में नहीं है।

आलप्तिगान – प्राचीनकाल में सर्वप्रथम रागालाप होता था। उसके बाद रूपकालाप तथा अन्त में आलप्तिगान होता था। इन तीनों के बाद राग की चीजें अर्थात, प्रबन्ध, वस्तु, रूपक गायी जाती थी। रागालाप के दस लक्षणों के अतिरिक्त आर्विभाव–तिरोभाव भी इसके माध्यम से दिखाया जाता था। आधुनिक काल में गीत का यह अनिबद्ध प्रकार प्रचार में नहीं है।

2.3.6 जातिगायन – 'यथा योगं ग्रामदूयाज्जायन्त इति जातयः।' अर्थात् जाति की उत्पत्ति दोनों ग्रामों से होती है। प्राचीनकाल में मुख्य रूपेण तीन प्रकार के ग्राम होते थे। षडज ग्राम, मध्यम ग्राम तथा गन्धार ग्राम। गन्धार ग्राम प्राचीनकाल से ही लुप्त माना गया है।

भरतकृत नाट्यशास्त्र में लिखा है कि दो ग्रामों से 18 जातियां उत्पन्न हुईं। षडज ग्राम से सात तथा मध्यम ग्राम से ग्यारह जातियां मानी गयी। इन जातियों को 'शुद्धा' और 'विकृता' जातियों के अर्न्तगत बांटा गया। इनमें से 7 शुद्ध तथा 11 विकृत मानी गयी। षडज ग्राम की चार जातियां– षाडजी, आर्षभी, धैवती तथा नैषादी और मध्यम ग्राम की तीन जातियां गांधारी, मध्यमा तथा पंचमी शुद्ध मानी गयी। ये नाम सातों स्वरों के आधार पर रखे गए। शेष ग्यारह जातियां(3 षडज ग्राम की और 8 मध्यम ग्राम की) विकृत जातियां कही गयी। इस प्रकार कुल 18 जातियां हुई। शुद्ध जातियां वे कहलायी, जिनमें सातों स्वर प्रयोग किए जाते थे। जैसे षाडजी, आर्षभी, गान्धारी, मध्यमा, पंचमी, धैवती आदि, इनमें नाम स्वर, ग्रह, अंश तथा न्यास होते थे। शुद्ध जातियों के लक्षणों में परिवर्तन करने से जैसे न्यास, अपन्यास, ग्रह, अंश, स्वर बदलने से तथा दो या दो से अधिक जातियों को एक में मिला देने से विकृत जातियों की रचना होती थी। जैसे–षाडजी और गन्धारी मिला देने से षडज कौशिकी, गन्धारी और आर्षभी को मिला देने से आंध्री विकृत जातियां बनती थीं।

राग और जाति एक–दूसरे के पर्यायवाची शब्द कहे जा सकते हैं। जिस प्रकार आजकल राग गायन प्रचलित है, उसी प्रकार प्राचीन काल में जाति गायन प्रचालित था।

प्राचीन काल में जाति के कुल दस लक्षण माने जाते थे – ग्रह, अंश, न्यास, अपन्यास, अल्पत्व, बहुत्व, औडत्व, षाडत्व, मन्द्र तथा तार। इसे भरत ने 'दशाविधि जाति लक्षण' कहा है। ग्राम से मूर्च्छना तथा मूर्च्छना के आधार पर जाति की रचना हुई है।

उपरोक्त वर्णन से आप भली–भांति 'जाति' शब्द से परिचित हो गए होंगे तथा जान गए होंगे कि भरत के अनुसार षडज ग्राम तथा मध्यम ग्राम से कितनी जातियां उत्पन्न हुई हैं, गन्धार ग्राम का उल्लेख क्यों नहीं मिलता है, जाति के कितने तथा कौन–कौन से लक्षण माने जाते थे तथा भरत ने 'दशाविधि जाति लक्षण' किसे कहा है।

मतंग कृत वृहद्देशी में श्रुति, ग्रह स्वर आदि के समूह से जिस विधा की रचना होती है उसे 'जाति' कहते हैं। "श्रुति ग्रहस्वरादि समूहाज्जायन्त इति जातयः।"

आचार्य वृहस्पति के अनुसार रंजन और अदृष्टि अभ्युदय को जन्म देते हुए विशिष्ट स्वर ही विशेष प्रकार के सन्निवेश से युक्त होने पर "जाति" कहे जाते हैं। यहाँ पर विशिष्ट 'स्वर सन्निवेश' से तात्पर्य जाति के उपरोक्त दस लक्षणों से है। कुछ काल के बाद यही लक्षण राग में दिखाए दिए जिससे यह सिद्ध हुआ कि जाति राग की पूर्ण संज्ञा थी। जाति गायन विशुद्ध माना गया और उसे गान्धर्व की श्रेणी में रखा गया जिससे मोक्ष की प्राप्ति मानी गयी तथा राग को संगीतकारों ने देशी संगीत की श्रेणी में रखा जिसका मुख्य प्रयोग जन मन रंजन ही कहा है।

सर्वप्रथम आपको ग्रह और न्यास के विषय में बताते हैं।

<u>ग्रह व न्यास</u> – 'ग्रह और न्यास' स्वरों का हमारे संगीत में अधिक महत्व तो नहीं है परन्तु प्राचीन संगीत में ये महत्वपूर्ण माने गए हैं। जिस स्वर से गीत का आलाप आरम्भ होता था, उसे ग्रह' स्वर कहते थे तथा जिस पर गीत समाप्त होता था उसे न्यास कहते थे। न्यास की व्याख्या इस प्रकार है – 'गीते समाप्तिकृन्यासः'। इसी प्रकार ग्रह की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है – 'गीतादिनिहितस्तत्र स्वरोग्रह इतीरितः।'

<u>अंश</u> – जाति के प्रमुख स्वर को प्राचीन काल में अंश कहा जाता था। जैसे आजकल किसी राग के प्रमूख स्वर को वादी स्वर कहते हैं उसी प्रकार पहले राग में वादी एक होता था, किन्तु जाति में एक या एक से अधिक अंश स्वर होते थे। कुल मिलाकर 63 अंश स्वर माने जाते थे।

<u>अपन्यास</u> – जिस स्वर पर गीत या वाद्य रचना का मध्य भाग समाप्त होता था वह अपन्यास स्वर कहलाता था। एक जाति में एक से अधिक अपन्यास स्वर भी होने सम्भव थे।

<u>अल्पत्व–बहुत्व</u> – जिन स्वरों का प्रयोग किसी जाति में अल्प होता था। उनका स्थान अल्पत्व माना जाता था। अल्पत्व के दो प्रकार माने गए थे– लंघन अल्पत्व तथा अनाभ्यास अल्पत्व। इसी प्रकार बहुत्व के भी दो प्रकार गाने गए थे– अलंघन बहुत्व तथा अभ्यास बहुत्व।

षाडत्व—औडवत्व – किसी जाति में 6 स्वर प्रयोग किए जाने पर षाडत्व और 5 स्वर प्रयोग किए जाने पर उनका स्वरूप औडवत्व कहलाता था।

मन्द्र तथा तार – प्रत्येक जाति की एक निश्चित सीमा होती थी, जिसके अन्दर गायक या वादक को रहना पड़ता था। मन्द्र स्थान में अंश, न्यास या अपन्यास तक जा सकते थे। इसी प्रकार तार स्थान में अंश स्तर से चौथे, पांचवें तथा सातवें स्वर तक जा सकते थे।

सन्यास एवं विन्यास – जिस स्वर पर गीत का प्रथम भाग खत्म हो, उसका संवादी स्वर सन्यास कहलता था तथा गीत का अंतिम स्वर विन्यास कहलाता था।
अन्तरमार्ग – जाति के दस लक्षणों का पालन करते हुए तिरोभाव—आर्विभाव दिखाना अन्तरमार्ग कहलाता था।

भरत कालीन जाति गायन के दस लक्षणों से आप भली प्रकार परिचित हो गए होंगे तथा जान गए होंगे कि जातिगायन के दस लक्षण कौन—कौन से हैं, ग्रह तथा न्यास किसे कहा जाता था। यहाँ पर यह बताना भी आवश्यकीय है कि भरतकालीन जाति गायन का विकसित रूप आधुनिक कालीन राग गायन है। प्राचीन काल में जाति गायन होता था तथा आधुनिक काल में राग गायन होता है।

जाति गायन में ग्रह स्वर का बड़ा महत्व था। इस स्वर से ही जाति गायन प्रारम्भ किया जाना आवश्यकीय होता था। जातिगायन में अंश स्वर का प्रयोग राग के 'वादी' स्वर के रूप में किया जाता था। आजकल राग गायन हेतु केवल वादी स्वर महत्वपूर्ण होता है और उसका चौथा या पांचवां स्वर संवादी माना जाता है।

किसी भी जाति का अन्तिम स्वर निश्चित होता था जिसे न्यास स्वर कहते थे। किन्तु आजकल राग गायन का कोई निश्चित अन्तिम स्वर नहीं होता है। आजकल राग गायन में वादी—संवादी स्वरों के अतिरिक्त राग के कुछ स्वरों पर न्यास(ठहराव) करना राग के स्वरूप बचाए रखने हेतु आवश्यक माना जाता है।

जाति गायन में षाडव अथवा औडव जाति बनाई जा सकती थी, परन्तु राग गायन में राग स्वयं सम्पूर्ण होने के अतिरिक्त स्वयं ही षाडव या औडुव होता है, अतः उनको पुनः षाडव या औडुव बनाना संभव नहीं होगा। आधुनिक काल में औडुव या षाडव जाति से राग में प्रयुक्त स्वरों की संख्या का बोध होता है। प्राचीन काल में जाति गायन में प्रत्येक जाति की मन्द्र व तार सप्तकों में सीमा निर्धारित थी किन्तु राग—गायन में ऐसा नहीं है। अब पूर्वांग—उत्तरांग प्रधान रागों का प्रचलन है। जातिगायन में 'तिरोभाव—आर्विभाव' क्रिया का प्रयोग जिस अर्थ में होता था, वैसा ही प्रयोग आधुनिक काल में राग गायन में होता है।

इस प्रकार आप भली भांति उपरोक्त अध्याय के माध्यम से जान गए होंगे कि जातिगायन क्या है, राग गायन और जातिगायन में क्या—क्या अन्तर हैं, जाति गायन कब किया जाता था तथा राग गायन कब प्रचार में आया। इस प्रकार हम स्पष्ट रूप से यह कह सकते हैं कि राग गायन कोई नवीन शैली नहीं है, बल्कि जाति गायन का विकसित रूप है।

2.3.7 शुद्ध राग – सर्वप्रथम हम 'राग' शब्द को स्पष्ट रूप से परिभाषित करेंगे। भारतीय संगीत में राग शब्द की परिभाषा इस प्रकार दी गयी है कि जो रचना स्वर तथा वर्ण से मिलकर बनी हो तथा चितरंजक हो उसे 'राग' कहते हैं। राग के स्वर 'सा रे ग म प ध नि' माने जाते हैं। इन्हें मिलाने की क्रिया को वर्ण कहते हैं। सरगम को स्वरों तथा वर्णों के आधार पर मिलाने पर 'राग' की संरचना हो जाती है। जैसे— "सा, रेग रेग, ग, पग रे ग रे सा" यह एक राग बन सकता है।

प्राचीन काल में सभी रागों को शुद्ध, छायालग तथा संकीर्ण रागों में विभाजित कर दिया जाता था तथा वे राग, जो कि पूर्णतः स्वतन्त्र हों तथा उनमें किसी भी अन्य राग की छाया न आती हो उसे 'शुद्ध राग' कहा जाता था। मतंग और शारंगदेव के ग्रन्थों में रागों के स्वरूपों का वर्णन इस प्रकार मिलता है—

शास्त्रोक्त नियमानतिक्रमेन स्वतो रक्ति हेतुत्वं।
छायालग रागत्वं नामान्य छाया लगत्वेनरक्ति हेतु त्वम्।
संकीर्ण रागत्वं नाम शुद्ध छायालगमिश्रत्वेन रक्ति हेतुत्वम्।।

अर्थात् शुद्ध राग वे राग हैं जिनमें शास्त्रों के नियमों का पूर्णरूप से पालन होता है। छायालग राग वे राग हैं जिनमें किसी अन्य राग की छाया दिखाई देती है तथा संकीर्ण राग वे राग हैं जो शुद्ध व छायालग रागों के मिश्रण से बनते हैं।

फकीरूल्ला के 'राग दर्पण' में शुद्ध राग प्रमुख छः रागों को कहा गया है। शारंगदेव के अनुसार शुद्ध राग एक प्रकार का स्वतन्त्र राग है। आधुनिक दस थाटों के राग 'शुद्ध राग' माने जा सकते हैं। राग कल्याण, राग मुल्तानी, राग तोड़ी आदि पूर्णतः शुद्ध राग कहे जाते हैं।

उपरोक्त वर्णन से आप भली—भाँति परिचित हो गए होंगे कि शुद्ध राग किसे कहते हैं तथा ये कौन—कौन से हैं।

2.3.8 छायालग राग — मतंग तथा शारंगदेव के अनुसार "छायालग राग" वे राग हैं जिनमें किसी अन्य राग की छाया दिखायी देती हो। जैसे राग परज की छाया राग बसन्त में, राग जलधर केदार में दुर्गा की छाया, राग मेघमल्हार में राग सारंग की तथा राग विलासखानी तोड़ी में राग भैरवी की छाया दिखायी देती है। अतः उपरोक्त राग 'छायालग राग' होंगे।

2.3.9 संकीर्ण राग — संकीर्ण राग वे राग हैं जो शुद्ध और छायालग रागों के मिश्रण से बने हैं। राग दर्पण में शुद्ध राग छः माने गए हैं तथा संकीर्ण राग उनकी रागिनी और उनके पुत्ररागों को कहा है। संकीर्ण राग को मिश्रराग भी कहा जाता है। जब एक राग में दूसरा राग मिल जाता है या जब दो या दो से अधिक रागों का मिश्रण किसी राग में दिखाई दे तो वह "संकीर्ण या मिश्र राग" कहलाता है। जैसे राग भैरव बहार में राग भैरव और बहार का मिश्रण है। राग जयन्त मल्हार में राग जैजैवन्ती तथा मल्हार का मिश्रण है। राग अहीर भैरव में राग काफी तथा भैरव का मिश्रण है। इसी प्रकार धानी कौंस में राग धानी तथा राग मालकौंस का मिश्रण है।

2.3.10 पूर्वांगवादी राग — प्रत्येक हिन्दुस्तानी राग दिन अथवा रात्रि में गाया—बजाया जाता है। रागों के समय को निर्धारित करने के लिए कुछ नियम भी हैं जैसे पूर्व राग, उत्तर राग, सन्धि प्रकाश राग, अध्वदर्शक स्वर आदि। पूर्व राग तथा उत्तर राग के नियम के अनुसार भारतीय विद्वानों ने सप्तक के सात स्वरों को दो भागों में बाँटा है। प्रथम भाग "सा रे ग म प" है तथा दूसरा भाग "म प ध नि सां" है। जिन रागों का वादी स्वर सप्तक के पूर्वांग में अर्थात् 'सा रे ग म' स्वरों में होता है, उन रागों को दिन के 12 बजे से रात्रि 12 बजे तक गाया—बजाया जाता है तथा ऐसे रागों को पूर्वांगवादी राग कहते हैं। उदाहरणार्थ राग खमाज का वादी स्वर गन्धार (ग) है। अतः यह पूर्व राग कहलाएगा तथा इसको 12 बजे दिन से 12 बजे रात्रि तक गाया—बजाया जा सकता है।

2.3.11 उत्तरांगवादी राग — जिन रागों का वादी स्वर सप्तक के उत्तरांग अर्थात् 'प ध नि सां' स्वर में होता है, उन्हें उत्तरांगवादी राग कहते हैं। ऐसे रागों को रात के 12 बजे से दिन के 12 बजे तक गाया—बजाया जाता है। उदाहरणार्थ राग भैरवी में धैवत स्वर वादी हैं, इसलिए यह एक उत्तरांगवादी राग है।

2.3.12 परमेल प्रवेशक राग — 'मेल' का तात्पर्य है 'थाट'। जैसा कि नाम से ही विदित होता है कि जो राग एक थाट से दूसरे थाट में प्रवेश करते हैं, उन्हें परमेल प्रवेशक राग कहते हैं। 'परमेल प्रवेशक' का अर्थ है दूसरे मेल में प्रवेश कराने वाला। ये राग ऐसे समय गाए जाते हैं जब उनके थाट का समय समाप्त होने को होता है तथा दूसरे थाट, जिनमें वे प्रवेश करते हैं, अर्थात् दूसरे थाट से उत्पन्न रागों का गायन काल हो जाता है ऐसे राग 'परमेल प्रवेशक राग' कहलाते हैं। उदाहरणार्थ जैजैवन्ती राग एक परमेल—प्रवेशक राग है। यह राग उस समय गाया—बजाया जाता है जब रात्रि के रे, ध शुद्ध स्वरों वाले रागों का समय समाप्त होता है तथा 'ग—नि' कोमल स्वरों वाले रागों का समय शुरू होता है। राग जैजैवन्ती एक वर्ग के रागों को समाप्त करके दूसरे वर्ग के रागों में प्रवेश कराता है, अतः यह एक परमेल—प्रवेशक राग कहलाता है।

जैसा कि आपको ज्ञात होगा कि भारतीय राग की मुख्य विशेषता है कि उनका गायन काल निर्धारित होता है। परमेल प्रवेशक राग भी अपने समय निर्धारण के अनुसार गाया–बजाया जाता है।

आप उपरोक्त अध्याय से परमेल प्रवेशक राग के विषय में भली–भाँति परिचित हो गए होंगे कि परमेल प्रवेशक राग किसे कहते हैं।

<u>2.3.13 सन्धि प्रकाश राग</u> – हिन्दुस्तानी संगीत में रागों का समय निर्धारित करने के लिए नियम बने हैं। शाब्दिक अर्थानुसार जो राग दिन और रात की सन्धि बेला में गाए–बजाए जाते हैं उन्हें सन्धि प्रकाश राग कहते हैं। सन्धि प्रकाश रागों का समय प्रातः 4 बजे से 7 बजे तक तथा सायं 4 बजे से 7 बजे तक का माना जाता है। अर्थात सुबह तथा शाम को 4 बजे से 7 बजे तक गाए जाने वाले रागों को सन्धि प्रकाश राग कहते हैं। इन रागों में रिषभ (रे) तथा धैवत (ध) स्वर कोमल लगते हैं। जैसे– भैरवी, पूर्वी, कालिंगडा आदि सन्धि प्रकाश राग हैं।

प्रातःकालीन सन्धि प्रकाश रागों के अन्तर्गत राग भैरव, रामकली, राग परज, जोगिया, भैरव के अन्य प्रकार तथा कालिंगडा आदि प्रमुख हैं। **सायंकालीन सन्धि प्रकाश राग** रागपूर्वी, मारवा, धनाश्री, पूरिया तथा राग श्री आदि प्रमुख हैं।

जिन रागों में तीव्र मध्यम की अपेक्षा शुद्ध मध्यम का महत्व कम होता है ऐसे सन्धि प्रकाश रागों में परज प्रमुख है। तीव्र मध्यम का आभास हमें इस बात की सूचना देता है कि अब रात्रि आने वाली है। रात्रि के बढ़ते ही तीव्र मध्यम प्रबल हो जाता है, अतः इस समय राग पूरिया धनाश्री, राग श्री, राग मुल्तानी व यमन राग आदि राग गाए–बजाए जाते हैं।

इस प्रकार हम स्पष्टतः कह सकते हैं कि शुद्ध मध्यम दिन की सूचना देता है तथा तीव्र मध्यम रात्रि की सूचना देता है। अतः समय–निर्धारण के अनुसार सुबह तथा शाम की सन्धि बेला में ही सन्धि प्रकाश राग गाए–बजाए जाते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. नाद की मुख्य तीन विशेषताएं लिखिए।
2. नाद के कितने प्रकार होते हैं?
3. ग्राम कितने प्रकार के होते हैं?
4. मूर्च्छनाओं के कितने प्रकार माने गए हैं?
5. ध्रुपद के साथ संगत हेतु किन तालों का विशेष प्रयोग होता है?
6. धमार गायन में किसका वर्णन मिलता है?
7. जाति के कुल कितने लक्षण माने जाते हैं?
8. जिस स्वर से जाति गायन प्रारम्भ किया जाता था, उसे क्या कहा जाता था?
9. जिस स्वर पर गीत की समाप्ति होती थी, वह क्या कहलाता था?
10. राग कल्याण, मुल्तानी तथा तोड़ी किन रागों की श्रेणी में आते हैं?
11. संकीर्ण राग किन रागों के मिश्रण से बनते हैं?
12. कौन से राग छायालग राग कहलाते हैं?
13. किन रागों को पूर्वांगवादी राग कहते हैं?
14. किन रागों को उत्तरान्गवादी राग कहते हैं?
15. जैजैवन्ती किस प्रकार का राग है?
16. राग मारवा, भैरव, राग कालिंगडा, राग पूर्वी किस प्रकार के राग हैं?

2.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप भारतीय शास्त्रीय संगीत के पारिभाषिक शब्दों जैसे नाद, ग्राम, मूर्च्छना, जाति गायन, निबद्ध गान, अनिबद्ध गान, शुद्ध राग, छायालग राग, संकीर्ण राग, पूर्वान्गवादिराग, उतरान्गवादि राग, परमेल प्रवेशक राग, संधि प्रकाश राग को समझ चुके होंगे। इन सांगीतिक शब्दों को समझने के पश्चात आपको संगीत के शास्त्र एवं क्रियात्मक पक्ष को समझ पाने में आसानी होगी। इन मूलभूत शब्दों व इनके अन्तर को समझ कर आप अपने गायन अथवा वादन में

इनका सही प्रयोग कर सकेंगे। भारतीय शास्त्रीय संगीत में इनका महत्वपूर्ण स्थान है। राग के विभिन्न प्रकारों के अध्ययन के पश्चात रागों के पूर्ण स्वरूप को समझने में भी आसानी होगी।

2.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. नाद की मुख्य तीन विशेषताएं हैं– (1) नाद का ऊँचा नीचापन (2) नाद का छोटा–बड़ापन (3) नाद की जाति एवं गुण है
2. नाद दो प्रकार के होते हैं – 1. आहत नाद 2. अनाहत नाद।
3. ग्राम तीन प्रकार के होते हैं– षडज ग्राम, मध्यम ग्राम तथा गन्धार ग्राम।
4. मूर्च्छनाओं के चार प्रकार माने गए हैं – शुद्धा, काकली संहिता, अन्तर संहिता तथा अन्तर–काकली संहिता।
5. ध्रुपद के साथ संगत हेतु चारताल व सूलताल का विशेष प्रयोग होता है।
6. धमार गायन में ब्रज की राधा–कृष्ण होरी का वर्णन मिलता है।
7. जाति के कुल दस लक्षण माने जाते है–ग्रह, अंश, न्यास, अपन्यास, अल्पत्व, बहुत्व, औडत्व, षाडत्व, मन्द्र व तार।
8. जिस स्वर से जाति गायन प्रारम्भ किया जाता था, उसे 'ग्रह स्वर' कहा जाता था।
9. जिस स्वर पर गीत की समाप्ति होती थी वह 'न्यास' कहलाता था।
10. राग कल्याण, मुल्तानी तथा राग तोड़ी शुद्ध रागों की श्रेणी में आते हैं।
11. संकीर्ण राग वे राग हैं, जो शुद्ध और छायालग रागों के मिश्रण से बनते हैं।
12. वे राग जिनमें किसी अन्य राग की छाया दिखायी देती हो, छायालग राग कहलाते हैं।
13. जिन रागों का वादी स्वर सप्तक के पूर्वांग में हो उन्हें पूर्वांगवादी राग कहते हैं।
14. जिन रागों का वादी स्वर सप्तक के उत्तरांग में हो उनको उत्तरांगवादी राग कहते हैं।
15. जैजैवन्ती एक परमेल प्रवेशक राग है।
16. राग मारवा, भैरव, राग कालिंगडा, राग पूर्वी आदि सन्धि प्रकाश राग हैं।

2.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शर्मा, भगवतशरण, हाईस्कूल संगीत शास्त्र।
2. श्रीवास्तव, श्री हरीश चन्द्र, प्रभाकर प्रश्नोत्तर।
3. जैन, डॉ0 रेनू, स्वर और राग।
4. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, संगीत शास्त्र दर्पण।
5. श्रीवास्तव, श्री हरीश चन्द्र, प्रवीण प्रवाह।
6. भातखण्डे, पं0 विष्णु नारायण, भातखण्डे संगीत शास्त्र।
7. संगीत, संगीत कार्यालय, हाथरस।
8. श्रीवास्तव, श्री हरीश चन्द्र, *राग परिचय भाग 1 एवं 2*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
9. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
10. परांजपे, श्रीधर, *संगीत बोध*।

2.7 निबंधात्मक प्रश्न

1. नाद, ग्राम, मूर्च्छना, जाति गायन, निबद्ध गान व अनिबद्ध गान का सविस्तार वर्णन कीजिए।
2. शुद्ध राग, छायालग राग, संकीर्ण राग, पूर्वांगवादी राग, उत्तरांगवादी राग, परमेल–प्रवेशक राग व सन्धि प्रकाश राग को विस्तार से समझाइए।

इकाई 3 – संगीतज्ञों (पं0एस0एन0 रातनजंकर, बड़े गुलाम अली खाँ एवं गिरिजा देवी) का जीवन परिचय

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 संगीतज्ञों का जीवन परिचय
  2.3.1 पं0 एस0 एन0 रातनजंकर
  2.3.2 बड़े गुलाम अली खाँ
  2.3.3 गिरिजा देवी
2.4 सारांश
2.5 शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0वी0एन0–202) के प्रथम खण्ड की तृतीय इकाई है। इससे पहले की इकाई में आप भारतीय संगीत में प्रचलित स्वरलिपि पद्धतियों का अध्ययन कर चुके हैं। पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर पद्धति का परिचय एवं पं0 भातखण्डे व पं0 पलुस्कर स्वरलिपि पद्धति की समानताओं व असमानताओं के विषय में भी आप इससे पूर्व की इकाई में जान चुके हैं।

प्रस्तुत इकाई में आपको पं0 तानसेन, उ0 अमीर खुसरो, हस्सू खाँ, हद्दू खाँ, पं0 एस0 एन0 राजनजंकर, बड़े गुलाम अली खाँ तथा गिरिजा देवी जी का जीवन परिचय तथा उनके सांगीतिक योगदान के बारे में बताया जाएगा।

इस इकाई के अध्ययन से आप इन प्रतिष्ठित संगीतज्ञों के व्यक्तित्व तथा संगीत के प्रचार में इनके योगदान के बारे में जान सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान सकेंगे कि :–

1. इन प्रतिष्ठित संगीतज्ञों को किन शासकों के शासन काल में आश्रय मिला।
2. इन्होनें किन–किन विद्वानों से संगीत की शिक्षा ग्रहण की।
3. इन्हें कौन–कौन से सम्मान व पुरस्कारों से सम्मानित किया गया।
4. इन्होनें कौन से नए राग, नई रचना, नए ग्रन्थ तथा नए वाद्यों की रचना की है।

2.3 संगीतज्ञों का जीवन परिचय

प्रस्तुत इकाई में आपको कुछ प्रतिष्ठित संगीतज्ञों(पं0 एस0 एन0 रातनजंकर, बड़े गुलाम अली खाँ, गिरिजा देवी) का जीवन परिचय व संगीत के क्षेत्र में उनके द्वारा दिए गए योगदान के बारे में बताया जा रहा है। संगीतज्ञों का जीवन परिचय जानना संगीत के विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी होता है। उन्हें इससे संगीत साधना के मार्ग में आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती है और उनको आर्दश मानकर उनके पद चिन्हों पर चलने की शक्ति प्राप्त होती है।

2.3.1 पं0 एस0 एन0 रातनजंकर – पं0 श्रीकृष्ण नारायण रातनजंकर स्व0 वि0 ना0 भारखण्डे के प्रमुख प्रतिनिधि एवं उनकी सांगीतिक विचारधारा के प्रबल पोषक के रूप में जाने जाते हैं। इनका जन्म 31 दिसम्बर सन् 1900 को महाराष्ट्रीय सारस्वत ब्राह्मण परिवार में श्री नारायण गोविन्द जी के पुत्र रूप में हुआ। सात वर्ष की आयु से ही इन्होंने संगीत सीखना आरम्भ कर दिया था।

इनकी प्रारम्भिक शिक्षा श्री कृष्णकांत भट्ट जी के सरंक्षण में हुई। बाद में इन्होंने कुछ दिन श्री अनंतमनोहर जोशी बुआ से सीखा। तत्पश्चात 13 वर्ष की आयु में पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे का शिष्यत्व ग्रहण किया। राज्य छात्रवृत्ति के अन्तर्गत इन्होंने पांच वर्ष तक उ0 फैयाज खां से भी संगीत की तालीम पाई।

इस प्रकार शीर्ष उस्तादों से सांगीतिक ज्ञान प्राप्त करने के बाद श्री रातांजन्कर ने भारत के बड़े नगरों में आयोजित संगीत सम्मेलनों में भाग लेकर ख्याति अर्जित की। सन् 1926 में, लखनऊ में जब मैरिस म्यूजिक कालेज की स्थापना हुई, तभी से इन्होंने शिक्षण कार्य प्रारम्भ कर दिया और सन् 1928 में उस कालेज के प्राचार्य बन गए। संगीत सृष्टा एवं शीर्ष संगीत शिक्षक के रूप में इनको विशेष ख्याति प्राप्त हुई। 1956 में मैरिस म्यूजिक कालेज से सेवामुक्त होने के बाद 1957 में इन्दिरा कला–संगीत विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति नियुक्त हुए तथा तीन वर्षों तक इस पद पर बने रहे।

भारत सरकार ने इनकी सांगीतिक सेवाओं के लिए 'पद्मभूषण' उपाधि से इनको अलकृंत किया तथा अन्य अनेक प्रतिष्ठित संगीत संस्थाओं ने इनको सम्मानित किया। इन्होंने अनेक संगीत–ग्रन्थ भी लिखे तथा संस्कृत के कई संगीत ग्रन्थों का अनुवाद भी किया। उनके 'तान संग्रह' और 'अभिनव गीत मंजरी' अधिक उपयोगी सिद्ध हुए।

श्री रातांजन्कर का सम्पूर्ण जीवन संगीत के लिए समर्पित रहा। वे जीवन भर शास्त्रीय संगीत के पोषक तथा हिमायती रहे। आप कई संगीत संस्थानों के निदेशक भी रहे। 14 फरवरी 1974 को आप स्वर्गवास हो गए।

अभ्यास प्रश्न

1. रिक्त स्थान भरिए :–

अ. रातनजंकर जी का जन्म..में हुआ।

ब. रातनजंकर जी की प्रारम्भिक शिक्षा ....के संरक्षण में हुई।

स. रातनजंकर सन् 1928 में..प्राचार्य बने।

द. भारत सरकार ने रातनजंकर जी को...से अलंकृत किया।

2. एक शब्द में उत्तर दीजिए :–

अ. पं0 एस0एन0 रातनजंकर किस संगीतज्ञ के प्रमुख प्रतिनिधि माने जाते हैं?

ब. रातनजंकर जी किस विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति बने?

2.3.2 बड़े गुलाम अली खाँ – बड़े गुलाम अली खाँ का जन्म सन् 1902 में लाहौर में हुआ था। किन्तु इनका मूल निवास स्थान पंजाब प्रान्त में 'कसूर' नामक गांव था। इनके पिताजी का नाम अलीबख्श तथा चाचा का नाम काले खां था जो कि उस समय के प्रसिद्ध संगीतकार थे। गुलाम अली खां के तीन

छोटे भाई बरकत अली खां, मुबारक अली खां तथा अमान अली खां भी श्रेष्ठ कलाकार थे।

गुलाम अली खाँ ने बाल्यकाल में अपने चाचा काले खां से संगीत शिक्षा प्राप्त की। पारिवारिक परिस्थितियों के कारण इन्हें सारंगी वादन सीखना पड़ा। किन्तु गायन का अभ्यास निरंतर चलता रहा। कुछ दिनों बाद बम्बई में आकर उ0 सिंधी खां से तालीम हासिल की। फिर देश के कई बड़े नगरों में आयोजित संगीत सम्मेलनों में भाग लिया। उन कार्यक्रमों से आपकी प्रसिद्धि बढ़ने लगी।

सन् 1947 में विभाजन के पश्चात से हिन्दुस्तान छोड़कर करांची, पाकिस्तान में रहने लगे। बीच–बीच में संगीत सम्मेलनों में भाग लेने के लिए हिन्दुस्तान आया करते थे, किन्तु उनका मन वहाँ न लगा। उन्होंने भारत लौटने की इच्छा प्रकट की और भारत सरकार ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। उसके बाद वे बम्बई में रहने लगे। सन् 1960 में वे लकवे से पीड़ित हो गए। उस समय आर्थिक दृष्टि से काफी परेशानी सामने आ गई। कारण उन्होंने कभी भी पैसा इकट्ठा करने की कोशिश नहीं की। जितना भी मिला उसे तुरन्त ही खर्च कर दिया। इसलिए अक्टूबर 1961 में महाराष्ट्र सरकार ने उन्हें 5 हजार आर्थिक सहायता औषधि के लिए दी। कुछ समय बाद वे अपने कार्यक्रम देने लगे। इन्होंने कई बार अखिल भारतीय आकाशवाणी कार्यक्रम के अन्तर्गत अपना कार्यक्रम प्रसारित किया।

खां साहब स्वभाव के बड़े सरल और मिलनसार थे किन्तु बहुत मिजाजी थे। जब जहाँ मन आता गाने लगते, गाना उनका नशा था, बिना गाना गाए नहीं रह सकते थे। गाते–गाते गायन में प्रयोग भी करते थे। स्वरों में इतना नियन्त्रण था कि कठिन से कठिन स्वर समूह बड़े सरल ढंग से कह देते, गले की लोच तो अद्वितीय थी। जहाँ से चाहते, जैसा भी चाहते गला शीघ्र घुमा लेते थे। पंजाब अंग की ठुमरी में तो इन्हें महारथ हासिल थी। पेचीदी हरकतें, दानेदार तानें, कठिन से कठिन सरगमों से मानों वे खेल रहे हों। उनकी हरकतों पर सुनने वाले दांतों तले अंगुली दबा लेते थे, किन्तु उनके लिए जैसे कोई साधारण सी बात थी। इनकी आवाज जितनी लचीली थी उतने ही ये विशालकाय थे। बड़ी–बड़ी मूँछें, कुर्ता और बंद मोहरी का पायजामा और रामपुरी काली टोपी से पहलवान जैसे दिखाई पड़ते थे, किन्तु बोलचाल और गायन में ठीक इसके विपरीत थे।

संगीत के घरानों के विषय में आपका कहना था कि घरानों ने संगीत का सत्यानाश कर दिया है। घरानों की आड़ में लोग मनमानी करने लगे हैं। मुद्रा–दोष के सन्दर्भ में बड़े गुलाम अली खाँ का विचार था कि गाते समय बिना मुंह बिगाड़े तथा बिना किसी किस्म का जोर डाले स्वरों में जान पैदा करनी चाहिए। 23 अप्रैल सन् 1968 को संगीत की सेवा करते हुए ये सदा के लिए दुनिया से चले गए। संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार प्राप्त, पद्मभूषण उ0 बड़े गुलाम अली खाँ ऐसे मीठे गायक थे, जिन्हें लोग अभी तक याद करते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. रिक्त स्थान भरिए :–

अ. बड़े गुलाम अली खाँ का जन्म सन् ....में......................में हुआ।

ब. बड़े गुलाम अली के पिता का नाम...................................था।

स. बड़े गुलाम अली की मृत्यु...........................सन् में हुई।

2. एक शब्द में उत्तर दीजिए :–

अ. बड़े गुलाम अली का मूल निवास स्थान कहाँ था?

ब. बड़े गुलाम अली ने बाल्यावस्था में किससे शिक्षा ग्रहण की?

स. बड़े गुलाम अली को कौन–कौन से बड़े पुरस्कार व सम्मान मिले हैं?

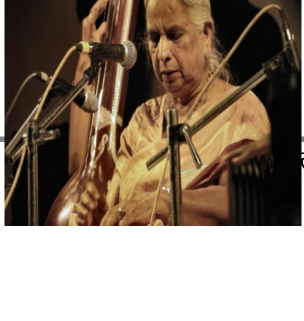

2.3.3 गिरिजा देवी – गिरिजा देवी का जन्म अप्रैल सन् 1929 में बनारस में हुआ था। इनके पिता बा0 रामदास राय संगीत के प्रसिद्ध कलाकार थे। संगीत का माहौल इन्हें बचपन से ही मिला। बाल्यकाल से ही इनकी संगीत शिक्षा प्रारम्भ हो गयी थी। लगभग 15 साल की उम्र तक पं0 सूरज प्रसाद मिश्र ने इनको संगीत की शिक्षा दी। उनकी मृत्यु के बाद इन्होंने पं0 श्री चन्द्र मिश्र का शिष्यत्व ग्रहण किया।

सुरीली, मधुर और शुद्ध घरानेदार गायिकाओं में वाराणसी की गिरिजा देवी अपना शीर्ष स्थान रखती हैं। आकाशवाणी लखनऊ के प्रथम कार्यक्रम से ही इनकी ख्याति रजनीगंधा की सुगन्ध की तरह सारे देश में फैल गई। बड़े–बड़े शहरों में आयोजित अखिल भारतीय संगीत कार्यक्रमों व सम्मेलनों से निमंत्रण मिलने लगे। श्रोता इनकी गायकी से मन्त्र मुग्ध होने लगे। आकाशवाणी दिल्ली के राष्ट्रीय कार्यक्रमों में भी इन्होंने कई बार भाग लेकर श्रोताओं को आनंदित किया। ख्याल, ठुमरी, टप्पा आदि की गायकी के अतिरिक्त ये पूर्वी लोक गीत, भजन, होरी, कजरी, दादरा तथा काव्य संगीत के गायन में भी सिद्धहस्त हैं। मोहक और गम्भीर आलाप, तैयार तानें तथा सच्चा स्वर लगाव आपकी साधना के परिचायक हैं। आपकी गायकी का सम्बन्ध सेनीय घराने से है।

गिरिजा देवी को संगीत की मूर्तिमान देवी कहा जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। भारत सरकार ने इनको सन् 1972 में पद्मश्री अलंकरण से विभूषित किया है। 1977 में संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार तथा 1989 में पद्मभूषण से पुरस्कृत किया गया है। इसके अतिरिक्त 2010 में आपको संगीत नाटक अकादमी फैलोशिप प्राप्त हुई है।

अभ्यास प्रश्न

1. रिक्त स्थान भरिए :–

अ. गिरिजा देवी का जन्म सन्...................में हुआ।

ब. गिरिजा देवी का मूल निवास स्थान...........................में था।

स. भारत सरकार ने गिरिजा देवी को सन्......................में पद्मश्री अलंकरण से विभूषित किया है।

2. एक शब्द में उत्तर दीजिए :–

अ. गिरिजा देवी का सम्बन्ध किस घराने से था?

ब. गिरिजा देवी के गुरू कौन–कौन रहे?

2.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आप पं0 तानसेन, अमीर खुसरो, हस्सू खां, हद्दू खां, पं0 एस0एन0 रातनजंकर, बड़े गुलाम अली खाँ तथा गिरिजा देवी इन संगीतज्ञों का जीवन परिचय तथा संगीत के क्षेत्र में किए गए इनके योगदान के बारे में जान चुके हैं। आपने जाना कि पं0 तानसेन, जो अकबर के दरबार के नौ रत्नों में से मुख्य रत्न बने, ने अनेक नवीन रागों की रचना की जो कि वर्तमान तक अत्यन्त लोकप्रिय हैं तथा अमीर खुसरो जो कि संगीत विशेषज्ञ के साथ–साथ कवि तथा महान योद्धा भी थे, को अनेक राग तथा गायन विधाओं का जन्मदाता माना जाता है। इनके अतिरिक्त आपने ग्वालियर घराने के मुख्य स्तम्भ माने जाने वाले हस्सू खां, हद्दू खां के बारे में तथा उनकी गायकी के विषय में जाना। पं0 एस0एन0 रातनजंकर जो कि पं0 भातखण्डे जी के प्रमुख प्रतिनिधि थे, के विषय में तथा उनके सांगीतिक क्रिया कलापों के विषय में भी आप जान चुके हैं। संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार प्राप्त तथा पद्मभूषण उ0 बड़े गुलाम अली खां के विषय में भी आप इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि कितनी विपरित परिस्थितियों में भी इन्होंने संगीत के क्षेत्र में नित्य परिश्रम के बल पर उपलब्धि हासिल की। इनके अतिरिक्त शीर्ष स्थान प्राप्त वाराणसी की मुख्य गायिकाओं में से एक गिरिजा देवी के बारे में भी आप जान चुके हैं। भारत सरकार द्वारा इनको अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है तथा अनेक गायन विधाओं में पारंगत हैं।

2.5 शब्दावली

1. विलक्षण – विशेषता युक्त लक्षण वाला
2. कौतुक – आश्चर्य
3. निमित्त – किसी के प्रयोगार्थ, विशेष कार्य हेतु
4. उत्कृष्ट – उच्च कोटि का
5. सौभाग्य सूर्य – जिसका भाग्य सूर्य के तेज की तरह हो
6. यथेष्ट – जो ठीक हो

7. यश पताका — यश का झंडा
8. उन्मुक्त — स्वच्छन्द, पूरी तरह स्वतंत्र
9. किवदन्ती — प्राचीन प्रचलित बातें
10. गुरू भगिनी — गुरू की बहिन
11. गृहीत — ग्रहण किया हुआ
12. ईजाद — खोजा गया
13. अद्वितीय — दूसरा कोई नहीं हो
14. मुद्रा दोष — शारीरिक, मुख की अशोभनीय लक्षण
15. शीर्ष स्थान — उच्च स्थान
16. परिचायक — परिचय देने वाला

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.3.1 — 1. रिक्त स्थान भरिए :—

अ. मुकुन्दराम पाण्डे   ब. 1532 ई0   स. स्वामी हरिदास   द. तन्ना मिश्र

2. एक शब्द में उत्तर दीजिए :—

अ. रीवा नरेश रामचन्द्र (राजा राम)   ब. दीपक राग

स. दरबारी कान्हाड़ा, मियां की सारंग, मियां मल्हार आदि

2.3.2 — 1. रिक्त स्थान भरिए :—

अ. सन् 1253 ई0, एटा जिला, पटियाली   ब. अमीर महमूद सैफूद्दीन   स. ख्याल

2. एक शब्द में उत्तर दीजिए :—

अ. दिल्लीपति गयासुद्दीन बलवन   ब. हजरत निजामुद्दीन औलिया

स. राग साजगिरी, सरपरदा आदि

2.3.3 — 1. रिक्त स्थान भरिए :—

अ. कादिरबख्श   ब. नत्थन पीरबख्श

2. एक शब्द में उत्तर दीजिए :—

अ. ग्वालियर घराना   ब. श्री दौलतराव शिंदे   स. बड़े मुहम्मद खां

2.3.4 — 1. रिक्त स्थान भरिए :—

अ. हस्सू खां   ब. लखनऊ   स. सन् 1875 ई0

2.3.5 — 1. रिक्त स्थान भरिए :—

अ. 31 दिसम्बर सन् 1900   ब. श्री कृष्णकांत भट्ट   स. मैरिस म्यूजिक कालेज   द. पद्मभूषण

2. एक शब्द में उत्तर दीजिए :—

अ. पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे   ब. इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय

2.3.6 — 1. रिक्त स्थान भरिए :—

अ. 1902, लाहौर   ब. अलीबख्श   स. 23 अप्रैल सन् 1968

2. एक शब्द में उत्तर दीजिए :—

अ. पंजाब प्रान्त में कसूर नामक स्थान   ब. अपने चाचा काले खां से

स. संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार, पद्मभूषण

2.3.7 — 1. रिक्त स्थान भरिए :—

अ. सन् 1929 ई0 ब. बनारस स. 1972

2. एक शब्द में उत्तर दीजिए :—

अ. सेनीया घराना ब. पं0 सूरज प्रसाद मिश्र, पं0 श्री चन्द्र मिश्र

2.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बसन्त, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. श्रीवास्तव, हरीशचन्द्र, राग परिचय भाग 2,3,4।
3. गर्ग, लक्ष्मीनारायण, हमारे संगीत रत्न, संगीत कार्यालय, हाथरस।

2.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. संगीत, संगीत कार्यालय, हाथरस।

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. निम्न में से किसी एक का जीवन परिचय व सांगीतिक योगदान के बारे में लिखिए।

अ. तानसेन ब. पं0 एस0 एन0 रातनजंकर स. उ0 बड़े गुलाम अली खाँ

2. हस्सू खां व हद्दू खां का जीवन परिचय दीजिए।

इकाई 4 – संगीत संबंधी विषयों पर निबन्ध लेखन

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्‌देश्य
3.3 निबन्ध की व्याख्या
3.4 निबन्ध के अवयव
3.4.1 भूमिका
3.4.1.1 संगीत शिक्षा विषय की भूमिका
3.4.2 विषय वस्तु
3.4.2.1 गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा
3.4.2.2 संगीत संस्थाओं द्वारा संगीत शिक्षा
3.4.2.3 विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में संगीत शिक्षा
3.4.3 उपसंहार – संगीत शिक्षा विषय पर
3.5 सारांश
3.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.7 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम(बी0ए0एम0वी0एन0–202) के प्रथम खण्ड की चतुर्थ इकाई है। इससे पहले की इकाई में आप भारतीय संगीत में प्रचलित स्वरलिपि पद्धतियों का अध्ययन कर चुके हैं। आप संगीतज्ञों के जीवन यात्रा से भी परिचित हो चुके होंगे।

इस इकाई में निबन्ध लेखन के विषय में आपको कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों से अवगत कराया जाएगा। निबन्ध लिखते समय किन–किन बातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है यह भी इस इकाई में वर्णित है।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप निबन्ध लेखन की विधि तथा निबन्ध लेखन के अवयवों से परिचित होंगे। आप किसी भी विषय पर निबन्ध लिखने में सक्षम हो सकेंगे।

3.2 उद्‌देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

- निबन्ध लेखन के अवयवों का सही प्रयोग कर सकेंगे।
- अपनी लेखन शैली का विकास कर सकेंगे।
- किसी भी विषय में आप व्यवस्थित रूप से निबन्ध प्रस्तुत कर सकेंगे।

3.3 निबन्ध की व्याख्या

निबन्ध के विषय में आपने पूर्व में काफी सुना है तथा प्राथमिक कक्षाओं से ही निबन्ध लेखन का अभ्यास कराया जाता है। प्रत्येक स्तर पर निबन्ध का स्तर भी पृथक होता है। निबन्ध किसी विषय विशेष की समग्र रूप में व्यवस्थित व्याख्या है। निबन्ध में विषय से सम्बन्धित समस्त पहलुओं पर विचार प्रस्तुत किए जाते हैं। अतः निबन्ध में विषय की व्याख्या का स्वरूप व्यापक हो जाता है। विषय से

सम्बन्धित पूर्व की उपलब्ध जानकारी को निबन्ध में समाहित कर उसका विश्लेषण किया जाता है और लेखक समालोचना के लिए भी स्वतंत्र रहता है। निबन्ध के माध्यम से लेखक व्याप्त भ्रान्तियों को भी दूर करने की चेष्टा करता है। इसी सन्दर्भ में निबन्ध और लेख के अन्तर को भी समझने की आवश्यकता है।

लेख प्रायः समस्या को लेकर आरम्भ किया जाता है एवं समस्या का निराकरण ही किसी लेख का मूल उद्‌देश्य रहता है। विद्यालय स्तर पर आपको दृश्यों का आंखों देखा वर्णन निबन्ध के रूप में लेखन का अभ्यास करवाया गया है। परन्तु विश्वविद्यालय स्तर पर निबन्ध, विषय से ही सम्बन्धित रहता है और उस विषय के बारे में आपको समस्त जानकारी और यदि आवश्यक हो तो गुण–दोष के साथ प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। लेख सामान्य विषय पर वक्तव्य रूप में रहता है। निबन्ध लेखन अभ्यास से ही आप लेख लिखने एवं शोध पत्र लिखने में भी सक्षम होते हैं। अतः निबन्ध लेखन के अभ्यास से आपकी लेखन क्षमता बढ़ती है और आप अपने विचारों को कलम के माध्यम से प्रस्तुत करने की तकनीक भी विकसित कर पाते हैं। इस इकाई में स्नातकोत्तर स्तर के विषयों के निबन्ध की लेखन विधि पर चर्चा की जाएगी।

3.4 निबन्ध के अवयव

किसी भी विषय पर निबन्ध को प्रायः निम्न भागों में बांटकर विषय की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं।

1. भूमिका 2. विषयवस्तु 3. उपसंहार

3.4.1 भूमिका – इसके अन्तर्गत विषय के बारे में जानकारी देते हुए व्याख्या के अन्तर्गत आने वाले सन्दर्भों के बारे में बताते हैं। भूमिका के माध्यम से निबन्ध का स्वरूप पता चल जाता है। व्याख्या किन–किन बिन्दुओं पर केन्द्रित होनी है इसका संक्षिप्त परिचय भी भूमिका के माध्यम से दिया जाता है। भूमिका में विषय प्रवेश प्रस्तुत किया जाता है अर्थात विषय क्या है एवं विषय पर निबन्ध के माध्यम से हम विषय के सन्दर्भ में क्या–क्या चर्चा करेंगे।

उदाहरण के रूप में संगीत शिक्षा विषय के माध्यम से आपको निबन्ध की लेखन शैली से परिचित कराएंगे।

3.4.1.1 संगीत शिक्षा विषय पर भूमिका – प्राचीन काल से ही संगीत का सन्दर्भ हमें सामवेद से प्राप्त होता है तथा वैदिक समय में ऋचाओं के गान की शिक्षा गुरूमुख से देने की परम्परा थी और इस परम्परा का निर्वाह काफी समय तक रहा। संगीत का वास्तविक स्वरूप क्रियात्मक है। अतः इसकी शिक्षा भी क्रियात्मक रूप में देने से ही संगीत का स्वरूप स्पष्ट हो पाता है। यद्यपि संगीत से सम्बन्धित अवयवों की व्याख्या समय–समय पर विभिन्न संगीत मनीषियों के द्वारा दी जाती रही है परन्तु संगीत को क्रियात्मक स्वरूप में प्रस्तुत करने के लिए शिष्य को गुरूमुख से ही शिक्षा ग्रहण करना होती थी जिसके लिए गुरूकुल की व्यवस्था रहती थी। वर्तमान में संगीत शिक्षा का स्वरूप बदल चुका है जिसकी चर्चा आगे की जाएगी। संगीत को विषय के रूप में समझा जाने लगा है जिससे उसकी शिक्षा भी उसी के अनुरूप होने लगी है। जबकि संगीत को कला के रूप में ही समझने की आवश्यकता है। वर्तमान में संगीत हेतु शिक्षा के विभिन्न माध्यमों का अध्ययन कर उनके गुण दोष पर इस निबन्ध के माध्यम से विचार किया जाएगा।

संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध की भूमिका उदाहरण स्वरूप आपके लिए प्रस्तुत की गई है जिससे आप किसी भी विषय पर निबन्ध हेतु भूमिका लिखने में सक्षम हो पाएंगे।

3.4.2 विषयवस्तु – भूमिका के पश्चात निबन्ध के विषय की विषय वस्तु प्रस्तुत की जाती है जिसमें विषय से सम्बन्धित सभी सन्दर्भों को प्रस्तुत किया जाता है। किसी विषय पर विषयवस्तु किस प्रकार लिखी जाती है इसका ज्ञान संगीत शिक्षा विषय पर उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत विषयवस्तु से जान सकेंगे।
संगीत शिक्षा विषय की विषयवस्तु – पहले संगीत की शिक्षा गुरूमुख से ही प्राप्त की जाती थी। परन्तु बाद में संगीत शिक्षा के नए स्वरूप भी स्थापित हुए। संगीत शिक्षा स्वरूप निम्न प्रकार हैः–

1. गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा।
2. संगीत संस्थाओं द्वारा संगीत शिक्षा।
3. विद्यालयों एव विश्वविद्यालयों द्वारा संगीत शिक्षा।

3.4.2.1 गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा – संगीत की शिक्षा शिष्य द्वारा गुरू के पास रहकर ही प्राप्त की जाती थी। इस शिक्षा पद्धति में शिष्य को अनुशासित होकर शिक्षा प्राप्त करनी होती थी। गुरू द्वारा शिष्य की लगन, धैर्य आदि को परखकर शिष्य को स्वीकार किया जाता था। गुरू द्वारा शिष्य को स्वीकार करने के पश्चात शिष्यत्व की औपचारिक घोषणा 'गंडा रस्म' अदायगी के साथ होती थी। इसमें गुरू और शिष्य एक दूसरे को 'धागा' बाँधकर प्रतिबद्धता का संकल्प लेते थे। इस प्रकार की शिक्षा में कोई निश्चित पाठ्यक्रम नहीं होता था और न ही संगीत शिक्षा की समयावधि निश्चित होती थी। गुरू द्वारा शिष्य की क्षमता के आधार पर ही शिक्षा दी जाती थी। एक ही गुरू के कई शिष्य होते थे। परन्तु यह आवश्यक नहीं था कि सबको एक ही शिक्षा दी जाए। दी हुई संगीत शिक्षा का अभ्यास भी गुरू के निर्देशन में ही होता था। संगीत शिक्षा के अतिरिक्त संगीत सुनने का मार्ग निर्देशन का उद्देश्य यह था कि शिष्य अपना विवेक एवं धैर्य न खो बैठे। इस प्रकार की शिक्षा में धैर्य का बहुत महत्व था और लगन से गुरू द्वारा दिए गए अभ्यास के नियमों से कठिन अभ्यास करने की आवश्यकता होती थी। गुरू जब तक शिष्य को कार्यक्रम प्रस्तुत करने के अनुकूल नहीं समझता था तब तक शिष्यों को कार्यक्रम प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं होती थी। बल्कि शिष्य को कार्यक्रम के योग्य समझने के पश्चात शिष्य को संगीतकारों के मध्य प्रस्तुत किया जाता था जिससे वह सभी संगीतज्ञों का आशीर्वाद प्राप्त करें। इस प्रकार की संगीत शिक्षा में शिष्य, गुरू के सानिध्य में संगीत के गूढ़ रहस्यों को जानता था। संगीत में घराने स्थापित हुए एवं घरानों की शिक्षा इस संगीत शिक्षा पद्धति में ही सम्भव थी। शिष्य अपने गुरू के घराने से सम्बन्धित हो जाता था और उस घराने का प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में अपना गौरव समझता था।

3.4.2.2 संगीत संस्थानों द्वारा संगीत शिक्षा – आधुनिक समय में संगीत संस्थानों का महत्व बढ़ गया है। पंडित विष्णुनारायण भातखण्डे एवं विष्णुदिग्बर पलुस्कर ने संगीत शिक्षा का प्रचार इस प्रकार किया जिससे संगीत क्रियात्मक रूप में विकसित होने लगा। गुरूमुख शिक्षा पद्धति में बहुत कम लोग ही शिक्षा प्राप्त कर पाते थे। अतः दो संगीत मनीषियों ने संगीत के अधिक प्रचार एवं प्रसार हेतु संगीत संस्थानों की कल्पना कर पंडित विष्णु नारायण भातखण्डे द्वारा लखनऊ में 'मैरिस कालेज आफ म्यूजिक' एवं विष्णुदिगम्बर पलुस्कर द्वारा पूना में 'गन्धर्व मंडल' की स्थापना की गई जिसके अन्तर्गत देश के कई शहरों में 'गन्धर्व संगीत महाविद्यालय' के नाम से संगीत शिक्षण संस्थान खोले गए। यह संगीत शिक्षण की औपचारिक व्यवस्था का आरम्भ था। इन संस्थानों में प्रत्येक वर्ष के लिए पाठ्यक्रम निश्चित किए गए तथा वर्ष के अन्त में परीक्षा की भी व्यवस्था की गई। इन संस्थानों में संगीत के गुणीजन, गुरू अथवा उस्तादों को संगीत शिक्षा हेतु आमंत्रित किया गया और इनके लिए किसी प्रकार के औपचारिक प्रमाण–पत्रों की बाध्यता नहीं रखी गई ।

संगीत के विद्यार्थियों को परीक्षा में सफल होने पर औपचारिक प्रमाण–पत्र देने की व्यवस्था भी की गई। संगीत की हर विधा और हर अंग के लिए विशेषज्ञ रखे गए। प्रतिदिन संगीत शिक्षा का समय भी निर्धारित किया गया तथा अन्य संस्थानों की भाँति इन संस्थानों में भी उत्सव एवं त्यौहारों पर अवकाश का प्राविधान था। जबकि गुरूमुख शिक्षा पद्धति में इस प्रकार की व्यवस्था नहीं रहती थी और

शिष्य को गुरू के पास रहकर ही सीखना होता था और गुरू द्वारा शिष्य को किसी समय भी शिक्षा के लिए बुला लिया जाता था जिसमें शिष्य को उपस्थित होना आवश्यक होता था। संगीत संस्थानों की शिक्षा में शिष्य गुरू के सानिध्य में निश्चित समय के लिए ही रहता है और प्राप्त की गई शिक्षा का अभ्यास स्वयं घर पर ही करता है। संगीत संस्थानों की शिक्षा पद्धति में गुरू का शिष्य के ऊपर नियंत्रण गुरूमुखी शिक्षा पद्धति की अपेक्षा कम रह पाता है। प्रारम्भ में इन संस्थानों में संगीत की शिक्षा हेतु पाँच से छः वर्षों का पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया। संस्थानों में पाँच, छः वर्ष की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त भी यह माना गया कि इसके पश्चात भी शिष्य को गुरू के सानिध्य की निरन्तर आवश्यकता रहती है। इन दो संस्थानों की स्थापना के पश्चात प्रयाग(इलाहाबाद) में 'प्रयाग संगीत समिति' एवं पंजाब के चंडीगढ़ क्षेत्र में प्राचीन कला संगीत संस्थान की स्थापना हुई। इन सभी संस्थानों ने देश के भिन्न–भिन्न शहरों में अपने केन्द्र स्थापित किए। यद्यपि इन केन्द्रों पर शिक्षा का प्रचार हुआ एवं विद्यार्थियों को प्रमाण–पत्र मिलने लगे।

गुरूमुखी शिक्षा में गुरू एवं शिष्य दोनों का ही लक्ष्य कलाकार बनना तथा बनाना होता था जिसके लिए शिष्य द्वारा अनुशासित अभ्यास किया जाता था और संगीत ही एकमात्र लक्ष्य रहता था। संगीत संस्थानो में ऐसे भी विद्यार्थी शिक्षा लेते थे जिनका लक्ष्य केवल संगीत ही नहीं होता था बल्कि संगीत की शिक्षा शौकिया रूप में लेते थे। अतः संगीत संस्थानों में संगीत के विद्यार्थियों को समूह में एकरूपता नहीं रहती थी। गुरू द्वारा भी एक ही कक्षा के समस्त विद्यार्थियों को लगभग एक जैसी ही शिक्षा दी जाती थी जो कि संस्थानों के शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता एवं सीमा भी थी। अतः संगीत संस्थानों से शिष्य उस प्रकार की शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाते थे जिस प्रकार की शिक्षा गुरू शिष्य परम्परा पद्धति में प्राप्त होती थी। संगीत संस्थानों का उद्देश्य संगीत शिक्षा के माध्यम से संगीत का प्रचार एवं प्रसार था और यह सामान्य रूप से संस्थानों के उदेद्श्य के बारे में कहा जाता था कि संस्थान तानसेन नहीं तो कानसेन तो बना ही देते हैं। अर्थात संगीत कलाकार न भी बन पाएं तो एक संगीत का अच्छा श्रोता तो बन ही जाता है। इन संगीत संस्थानों ने विभिन्न शहरों में अपने परीक्षा केन्द्र खोले जहाँ पर संगीत शिक्षा देने का भी प्रावधान किया गया तथा विद्यार्थी इन केन्द्रों से संगीत सीखकर प्रमाण–पत्र प्राप्त करने लगे। इन प्रमाण–पत्रों को सरकार के शिक्षा निदेशालय द्वारा मान्यता प्रदान की गई।

विद्यालयों में बिना इन संस्थानों के प्रमाण–पत्र के नियुक्तियाँ नहीं होती हैं। विद्यालय स्तर पर शिक्षक के लिए अन्य विषयों में बी. एड. अनिवार्य अर्हता है परन्तु संगीत विषय में शिक्षक होने के लिए बी.एड. के स्थान पर 'संगीत विशारद' एवं 'संगीत प्रभाकर' होना आवश्यक है जो कि इन संस्थानों द्वारा दिया गया प्रमाण पत्र है। इस व्यवस्था से इन केन्द्रों पर संगीत के प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों की भीड़ बढ़ गई। इन संगीत संस्थानों में शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात कलाकार बनने के इच्छुक विद्यार्थियों को गुरू शिष्य परम्परा के अन्तर्गत ही शिक्षा लेना अनिवार्य रहता है इन संस्थानों द्वारा सामान्य संगीत के जिज्ञासु एवं विद्यार्थियों ने संगीत के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

<u>3.4.2.3 विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों द्वारा संगीत शिक्षा</u> — स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में संगीत विषय अन्य विषयों की भाँति संगीत विषय पाठ्यक्रम में शामिल किया गया। विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में संगीत विषय का पाठ्यक्रम तैयार कर समय–सारिणी में वादन (पीरियड) शिक्षण के लिए निश्चित किया गया। इनमें शिक्षण पाठ्यक्रम के अनुसार ही दिया जाता है और अध्यापक द्वारा सब विद्यार्थियों को समान रूप से ही अध्यापन कराया जाता है। स्नातक स्तर तक एक वादन प्रायः 45 मिनट का होता है जो कि संगीत की व्यवहारिकता के अनुकूल नहीं है क्योंकि 45 मिनट के अन्दर ही वाद्यों को स्वर में करना सम्भव नहीं हो पाता है। अतः देखा जा रहा है कि विश्वविद्यालय स्तर पर भी संगीत की मूल आवश्यकता वाद्यों को स्वर में करना विद्यार्थी पूर्ण से नहीं सीख पाते हैं। स्नातक स्तर तक विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों को संगीत विषय के अतिरिक्त अन्य विषयों का भी अध्ययन करना होता है। अतः विद्यार्थी संगीत के प्रति पूर्ण समर्पित नहीं

हो पाता है। संगीत की आवश्यकता होती है, जिसमें अधिक से अधिक समय देने से ही संगीत कला को समझा जा सकता है।

विद्यालय, विश्वविद्यालय में संगीत विषय प्रारम्भ होने से संगीतज्ञों को व्यवसाय तो प्राप्त हुआ परन्तु इससे संगीत शिक्षा की गुणात्मकता पर प्रभाव पड़ा। यद्यपि विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में संगीत के विद्वान भी नियुक्त हुए परन्तु इन संस्थानों की व्यवस्था में उतने समय के लिए संगीत शिक्षक भी सीमा में बँध गए। संगीत संस्थानों में गुरू परम्परा पद्धति में शिष्य पूर्ण रूप से संगीत के वातावरण में रहता था और संगीत संस्थानों में भी जितने समय के लिए वह संस्थान में है उतने समय तक वह संगीत के वातावरण में रहता था। परन्तु विद्यालय और विश्वविद्यालय में विद्यार्थी केवल संगीत के वादन (पीरियड) में ही संगीत के वातावरण से जुड़ा रहता है। विद्यालयों, विश्वविद्यालयों से उपाधि सामान्य रूप में मिलती है जिसमें संगीत एक विषय के रूप में रहता है जबकि संगीत संस्थानों में मिलने वाली उपाधि एवं प्रमाण पत्र केवल संगीत का ही मिलता है और गुरू–शिष्य परम्परा में तो कोई औपचारिक प्रमाण–पत्र नहीं होता है। इसमें शिष्य स्वयं अपनी शिक्षा का प्रमाण प्रस्तुत करता है। विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों में संगीत विषय शिक्षा, स्नातकोत्तर उपाधि के लिए दी जाने लगी है, जिसमें केवल संगीत विषय का ही अध्ययन विद्यार्थी को करना होता है।

विश्वविद्यालय स्तर पर केवल स्नातकोत्तर कक्षाओं में ही विद्यार्थी संगीत के वातावरण में रहता है जो मात्र दो वर्ष के पाठ्यक्रम में निबद्ध होता है। संगीत की शिक्षा गुणात्मकता के साथ स्नातकोत्तर स्तर पर ही हो पाती है जिसका स्वरूप संगीत संस्थानों की शिक्षा जैसा रहता है। स्नातकोत्तर कक्षाओं में विद्यार्थियों को संगीत के अध्ययन और अभ्यास का समय प्राप्त होता है। विश्वविद्यालय स्तर पर स्नातक की कक्षाओं में संगीत विषय का विद्यार्थी सीमित समय जो कि उसके लिए समय सारिणी में निश्चित किया गया उसमें ही संगीत शिक्षक के सम्पर्क में रहता है। इसी उपलब्ध समय में शिक्षक का उद्देश्य निर्धारित पाठ्यक्रम पूरा करने का भी होता है। अतः गुरू शिष्य परम्परा पद्धति एवं संगीत संस्थान द्वारा शिक्षा पद्धति की तुलना में विश्वविद्यालय द्वारा दी जाने वाली संगीत शिक्षा की गुणवत्ता में कमी रहती है। स्नातकोत्तर में भी यही स्थिति रहती है परन्तु इसमें विद्यार्थी तथा शिक्षक के पास संगीत विषय के लिए अधिक समय रहता है।

संगीत के जिज्ञासु विद्यार्थी विश्वविद्यालय शिक्षा के अतिरिक्त संगीत संस्थानों एवं गुरू की सहायता भी प्राप्त करते हैं। संगीत में शिक्षक बनने हेतु विश्वविद्यालय प्रमाण–पत्र की आवश्यकता होती है अतः विद्यार्थी संगीत हेतु विश्वविद्यालय में प्रवेश लेता है। केवल विश्वविद्यालय की संगीत शिक्षा से विद्यार्थी का कलाकार बनना कठिन है और न ही विश्वविद्यालय का यह उद्देश्य ही है। विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों को संगीत पढ़ाने का उद्देश्य है कि विषय से सम्बन्धित आयामों से विद्यार्थी को परिचित कराया जा सके जिससे वह भविष्य के लिए अपने विकल्प चुन सके।

विश्वविद्यालय की उपाधि प्रमाण–पत्र का महत्व संगीत की शिक्षक अर्हता के रूप में ही है। व्यवसायिक कलाकार बनने में इसका कोई महत्व नहीं है। विद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत शिक्षक हेतु अर्हताएं एवं विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत शिक्षक हेतु अर्हताएं व्यवहारिक नहीं हैं जिससे इनमें सदैव योग्य संगीत शिक्षक नियुक्त नहीं हो पाते हैं। संगीत विषय मुख्य रूप से क्रियात्मक विषय है परन्तु नैट की परीक्षा जो कि विश्वविद्यालय में संगीत शिक्षक के लिए पास करना अनिवार्य अर्हता है। परन्तु इस परीक्षा में संगीत विषय हेतु विद्यार्थी के क्रियात्मक ज्ञान को नहीं परखा जाता है जबकि संगीत विषय के शिक्षक के लिए क्रियात्मक ज्ञान होना आवश्यक है।

अभी तक आपने संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध हेतु भूमिका एवं विषय वस्तु का अध्ययन किया जो कि निबन्ध लेखन के लिए उदाहरण स्वरूप आपको बताया गया। किसी विषय के निबन्ध पर उपसंहार लिखने के विषय में संगीत शिक्षा विषय निबन्ध पर नीचे लिखे गए उपसंहार से समझेंगे।

3.4.3 उपसंहार संगीत शिक्षा विषय पर – संगीत शिक्षा गुरू शिष्य परम्परा, संगीत संस्थानो के माध्यम से विद्यालय एवं विश्वविद्यालय में एक विषय के रूप में दी जाती है। गुरू शिष्य परम्परा में गुरू और

शिष्य के मध्य अटूट सम्बन्ध बन जाता है और शिष्य गुरू के सानिध्य में रहकर संगीत के गूढ़ रहस्यों को सीखता है। इसमें गुरू एवं शिष्य दोनों का उद्देश्य कलाकार बनाना तथा बनना होता है। संगीत संस्थानों में भी केवल संगीत शिक्षा दी जाती है जिसमें विद्यार्थी सीमित समय के लिए ही गुरू के सम्पर्क में रहता है और विश्वविद्यालय शिक्षा में स्नातक स्तर पर तो बहुत ही कम समय के लिए विद्यार्थी संगीत के वातावरण में रहता है। परन्तु संगीत शिक्षक बनने हेतु संस्थानों एवं विश्वविद्यालय में प्रमाण–पत्रों की आवश्यकता होती है।

संगीत के जिज्ञासु विद्यार्थियों के लिए यह आवश्यक है कि वह संस्थानों की शिक्षा अथवा विश्वविद्यालय की शिक्षा के साथ गुरू शिष्य परम्परा पद्धति में भी किसी गुरू से शिक्षा प्राप्त करे जिससे उसके पास संगीत शिक्षक का व्यवसाय अथवा व्यवसायिक कलाकार बनने का विकल्प रहेगा। उपरोक्त कथन से यह निष्कर्ष न निकाला जाए कि विश्वविद्यालय संगीत शिक्षा से ही अच्छा संगीत शिक्षा बन सकता है जबकि संगीत की सही शिक्षा प्राप्त ही अच्छा शिक्षक बनेगा। वर्तमान व्यवस्था में संगीत शिक्षक हेतु सभी माध्यमों का अपना महत्व है अतः विद्यार्थी को अपने निश्चित उद्देश्य के लिए इनका चयन करने की आवश्यकता है।

संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध के माध्यम से आपने निबन्ध लेखन के विषय में अध्ययन किया। कुछ अन्य संगीत सम्बन्धित विषयों की सूची दी जा रही है।

अभ्यास हेतु निबन्ध के विषय

1. फिल्मो में संगीत
2. संगीत में इलक्ट्रोनिक उपकरणों का योगदान
3. लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत
4. भक्ति एवं संगीत
5. संगीत एवं अध्यात्म
6. संगीत एवं संचार माध्यम (रेडियो व टी0वी0)
7. संगीत में अवनद्य वाद्यों की भूमिका
8. संगीत गोष्ठी

जैसा कि आपको बताया जा चुका है कि प्रत्येक विषय के निबन्ध का आरम्भ भूमिका से किया जाता है और निबन्ध का समापन उपसंहार से किया जाता है। उपरोक्त विषयों की विषयवस्तु नीचे दी जा रही है जिसके आधार पर आप इन विषयों पर निबन्ध लिख सकेंगे।

1. <u>फिल्मों में संगीत</u>
   - विषयवस्तु
   - फिल्म में संगीत का प्रयोग
   - पार्श्व गायन
   - फिल्म में वाद्यों का प्रयोग
   - गायन के साथ वाद्यों का प्रयोग
   - पार्श्व संगीत में वाद्यों का प्रयोग
   - फिल्मों में संगीत का स्थान एवं उपयोगिता

2. <u>संगीत में इलक्ट्रोनिक उपकरणों का योगदान</u>
   - विषयवस्तु
   - संगीत में प्रयोग होने वाले इलक्ट्रोनिक उपकरण

     (अ) – इलक्ट्रोनिक तानपुरा
     (ब) – इलक्ट्रोनिक तबला
     (स) – इलक्ट्रोनिक लहरा मशीन

- संगीत के संरक्षण एवं शिक्षा में सहायक इलक्ट्रोनिक उपकरण
  1. ग्रामोफोन 2. टेपरिकार्डर

3. लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत

- विषयवस्तु
- लोक संगीत की पृष्ठभूमि
- शास्त्रीय संगीत का परिचय
- लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत का सम्बन्ध

4. भक्ति एवं संगीत

- विषयवस्तु
- भक्ति की व्याख्या
- विभिन्न धर्मों में भक्ति हेतु संगीत का प्रयोग
  1. हिन्दू 2. मुस्लिम 3. सिख 4. इसाई

5. संगीत एवं आध्यात्म

- विषयवस्तु
- संगीत की उत्पत्ति
- वैदिक कालीन संगीत
- आध्यात्म में संगीत का महत्व

6. संगीत एवं संचार माध्यम

- विषयवस्तु
- रेडियो में संगीत
- टेलीविजन में संगीत
- रेडियो तथा टेलीविजन का संगीत के प्रचार–प्रसार में भूमिका

7. संगीत में अवनद्य वाद्य की भूमिका

- विषयवस्तु
- संगीत का परिचय
- संगीत के तत्व
- संगीत के अवनद्य वाद्य
- संगीत में अवनद्य वाद्यों का प्रयोग

8. संगीत गोष्ठी

- विषयवस्तु
- संगीत गोष्ठी का परिचय
- संगीत गोष्ठी में कलाकार की भूमिका
- विभिन्न प्रकार की संगीत गोष्ठी
- संगीत गोष्ठी के श्रोता

उपरोक्त कुछ विषय आपके निबन्ध लेखन के अभ्यास के लिए दिए गए हैं। इन सभी विषयों पर आप निबन्ध लिखने का अभ्यास ऊपर अध्ययन कराई विधि के अनुसार करेंगे। सभी विषयों पर निबन्ध के अवयव का क्रम भूमिका, विषयवस्तु एवं उपसंहार रहेगा। उपसंहार एवं भूमिका के प्रभावशाली होने से आपका निबन्ध उच्चस्तर का होता है यद्यपि विषय वस्तु भी महत्वपूर्ण है। उपसंहार में विषय वस्तु में की गई चर्चाओं अथवा विवरणों से प्रकट तथ्यों को परिणाम स्वरूप में प्रस्तुत किया जाता है। आप को इन सबका ज्ञान संगीत शिक्षा विषय पर उदाहरण स्वरूप निबन्ध के माध्यम से दिया गया है। अतः उसी आधार पर आप उपरोक्त विषयों पर निबन्ध लेखन का अभ्यास करें।

3.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप निबन्ध लेखन की शैली से परिचित हो चुके होंगे। संगीत विषयों पर निबन्ध लेखन की शैली एवं विद्या से आपको इस इकाई के माध्यम से परिचित कराया गया। निबन्ध लेखन से आप अपने विचारों को लेखन के माध्यम से प्रकट करने की तकनीक विकसित करते हैं जो बाद में आपको शोधपत्र, लेख एवं शोध कार्य में सहायक सिद्ध होगी। उदाहरण स्वरूप दिए गए संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध से आप संगीत विषयों पर निबन्ध लेखन के विषय जान गए हैं एवं संगीत विषय पर लिखने में सक्षम होंगे। संगीत के गहन अध्ययन एवं संगीत के सन्दर्भों के अध्ययन से आप संगीत विषयों पर निबन्ध लिखने में सक्षम हो गए होंगे।

3.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. गर्ग, श्री लक्ष्मीनारायण, *निबन्ध संगीत*, संगीत कार्यालय, हाथरस।

3.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. इकाई में दिए गए अभ्यास हेतु निबन्ध विषयों में से किसी एक विषय पर निबन्ध लेखन कीजिए।

इकाई 5 – पाठ्यक्रम के रागों में देश, शुद्ध कल्याण एवं शुद्ध सारंग का परिचय, स्वर विस्तार एवं स्वर समूह के माध्यम से राग पहचानना तथा उनमें विलंबित ख्याल एवं मध्यलय ख्याल को तानों सहित लिपिबद्ध करना।

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 रागों का परिचय
  1.3.1 देस
  1.3.2 शुद्ध कल्याण
  1.4.3 शुद्ध सारंग

1.4 विभिन्न स्वर समूह के माध्यम से राग पहचानना
1.5 सारांश
1.6 शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठयक्रम (बी0ए0एम0वी0एन0–202) के प्रथम खण्ड की पंचम इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप भारतीय संगीत के इतिहास, भारतीय संगीत से सम्बन्धित शब्दावली व आधुनिक समय में प्रचलित गायन शैलियों के बारे में भली–भाँति जान चुके होंगे।

प्रस्तुत इकाई में आपको **पाठ्यक्रम के रागों में देश, शुद्ध कल्याण एवं शुद्ध सारंग का परिचय, स्वर विस्तार एवं स्वर समूह के माध्यम से राग पहचानना तथा उनमें विलंबित ख्याल एवं मध्यलय ख्याल को तानों सहित लिपिबद्ध करना** बताया जाएगा। इसके अतिरिक्त पाठ्यक्रम के रागों का परिचय तथा रागों के मुख्य स्वर समुदाय की सहायता से आप राग कैसे पहचान सकते हैं, यह भी बताया जाएगा।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप हिन्दुस्तानी संगीत के बारे में तथा पाठ्यक्रम के सभी रागों का विस्तृत परिचय भी जान सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप :–

- पाठ्यक्रम के रागों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- विभिन्न स्वर समुदाय की सहायता से राग पहचानने की क्षमता को बढा सकेंगे।

1.4 रागों का परिचय

प्रस्तुत पाठयक्रम में राग विहाग, राग बागेश्री, राग वृन्दावनी सारंग, राग देस व राग शुद्धकल्याण हैं। इन सबका इस इकाई में परिचय दिया जा रहा है।

1.4.1 राग देस :–

पंचम वादी अरू रिखब संवादी संजोग।
सोरठ के ही सुरन ते देस कहत हैं लोग।। रागचन्द्रिकासार

थाट – खमाज
वादी – रे
सम्वादी – प
जाति – औडव–सम्पूर्ण
समय – रात्रि का दूसरा प्रहर

यह राग खमाज थाट जन्य रागों में से एक है। आरोह में गन्धार और धैवत स्वर वर्जित है। अवरोह वक्र रिषभ के साथ सम्पूर्ण है अतः इसकी जाति औडव–सम्पूर्ण मानी जाती है। इसका वादी स्वर रे तथा सम्वादी स्वर प है। गायन समय रात्रि का दूसरा प्रहर है। इसमें दोनों निषाद प्रयुक्त होते हैं। यह राग अत्यन्त लोकप्रिय राग है।

आरोह – सा रे म प नि सां।
अवरोह – सां नि॒ ध प, म ग, रे ग सा।
पकड़ – रे, म प, नि॒ ध प, प ध प म ग रे ग सा।
न्यास स्वर – सा, रे, प।
समप्रकृति राग – सोरठ, तिलक कामोद।

विशेषताएं :–

1. इसके आरोह में शुद्ध और अवरोह में कोमल निषाद का प्रयोग किया जता है। जैसे म प नि सां, रे नि॒ ध प, ध म ग रे।
2. गन्धार तथा धैवत स्वर आरोह में वर्जित होने के बाद भी कभी–कभी राग की सुन्दरता बढ़ाने के लिए गन्धार और धैवत स्वर आरोह में प्रयुक्त होते हैं। जैसे–रे ग म ग रे तथा प ध नि॒ ध प ।
3. इस राग में अधिकतर छोटा ख्याल तथा ठुमरियाँ गाई–बजाई जाती हैं।
4. अवरोह में अधिकतर रिषभ वक्र प्रयोग किया जाता है। जैसे म ग रे – ग – ऩि सा।
5. ध, म की संगति बार–बार दिखाई जाती है। इसलिए अवरोह में अधिकतर पंचम को अल्प कर ध म प्रयोग किया जाता है। जैसे– नि॒ ध प, ध म रे, ग – ऩि – सा।

स्वर विस्तार :–

1. रे ऩि –– सा, रे[ग] म ग रे, ग –– रे ऩि सा, प़ ऩि सा रे सा ––, सा ऩि ध़ प़ प़ ऩि –– सा।
2. सा रे रे म प़, नि ध प, प ध म ग रे ग सा, रे रे म प नि॒ ध प।
3. नि सा रे म ग रे, रे म प म ग रे, रे प– म ग रे, रे म प ध म ग रे, प म ग रे ग – रे ऩि सा।
4. ऩि सा रे म प ध प नि –––– सां –– नि सां, प नि सां रें नि ध प, ध म ग रे, रे म प ध म ग रे, रे ग ऩि सा।
5. म प नि सां–– नि सां, प नि सां, प नि सां रें –– रें नि सां, म प नि सां ––– रें मं गं रें – गं – रें – गं – नि –– सां, सां नि॒ ध प, ध म ग रे, प म ग रे, म ग रे ग ऩि –– सा।

1.4.2 राग शुद्धकल्याणः–

म नि बरजे आरोह में, अवरोहन षाडव जान।
ग ध वादी– सम्वादी ते, शुद्ध कल्याण पहचान।। रागचन्द्रिकासार

थाट – कल्याण।
वादी – गन्धार।
सम्वादी – धैवत।
जाति – औडव–षाडव।
समय – रात्रि का प्रथम प्रहर।

इसे कल्याण थाट से उत्पन्न माना गया है। इसके आरोह में म, नि तथा अवरोह में म वर्जित है। अतः इसकी जाति औडव–षाडव है तथा निषाद स्वर अल्प है। वादी स्वर गन्धार और सम्वादी धैवत है। इसका गायन समय रात्रि का प्रथम प्रहर है। इसके सब स्वर शुद्ध है केवल अवरोह में तीव्र मं अति अल्प है।

आरोह	–	सा गरे ग प सांध सां।
अवरोह	–	सा निध प मं ग रे पग प परे सा।
पकड़	–	ग रे सा रे ग प रे – सा।
न्यास के स्वर	–	सा, रे, ग और प
समप्रकृति राग	–	भूपाली।

<u>विशेषताएं</u> :–

1. शुद्ध कल्याण की उत्पत्ति भूपाली और कल्याण के मेल से हुई है। आरोह भूपाली और अवरोह कल्याण का है। अवरोह में मं (तीव्र मध्यम) अति अल्प है। इसलिए अवरोह की जाति में मं की गणना नहीं की गई है।
2. प रे की कण युक्त संगति इसकी प्रमुख विशेषता है। जैसे ग ऽ परे सा।
3. **यह** गम्भीर प्रकृति का राग है। इसकी चलन मन्द्र, मध्य तथा तार तीनों सप्तकों में अच्छी प्रकार से होता है।
4. **इसमें** निषाद स्वर अल्प है। कुछ गायक इसे पूर्णयता वर्जित कर देते हैं। कुछ केवल मींड में और कुछ इसका स्पष्ट प्रयोग करते हैं। नि का प्रयोग अधिक हो जाने से कल्याण राग की छाया आने का आशंका रहती है इसलिए शुद्ध नि का प्रयोग मन्द्र की तुलना में मध्य सप्तक में कम प्रयोग करते हैं।

<u>स्वर विस्तार</u> :–

1. सा– गरे (सा) नि़ ध़ नि़ ध़ प़ – निध़ सा रे सा, सा रे ग , रे ग प रे ग सा रे घ़ – प़ प़ ध़ – –– सा।
2. सा – रे सा, ग रे सा– ध़ ध़ –– प़ – प़ ध़ प़ सा ––– ग रे सा, रे ग रे ––– प ग, ध प ग, सा रे ग प ग –– रे ग, सा रे ध़ प़ ध़ –– सा।
3. सा रे ग रे ग प ग, ग प ध ––– प ––– ग पध ––– सां, प ध सां –– रें सां, सां नि ध प, ग प ग ध –– प ग, ग परे सा।
4. प ध –– सां , सां ध सां, सां रें गं रें सां, रें सां (सां) नि ध नि ध प , ग प ध सां, रें ऽ सां, सां रें ग प गं रें गं सां रें ध –– सां सां नि ध प, प ग ध प ग, सा रे ग प ग परे ऽ सा, सा रे ग रे सा ध़ प़ सा।

1.4.3 <u>राग सारंग</u> :–

शुद्ध सारंग काफी थाट के अन्तर्गत आने वाला राग है। सारंग के अनेक प्रकारों में दोपहर में गाया जाने वाला यह प्रमुख राग है। इस राग का वादी स्वर ऋषभ और संवादी स्वर पंचम है। इस राग में ग स्वर वर्जित होने के कारण इसकी जाति षाड़व मानी जाती है। प्रायः मध्ययुगीन सभी ग्रन्थों में सारंग नामक मेल, वर्तमान शुद्ध सारंग के समान प्राप्त होता है। जो–जो राग ग्रन्थों में पाये जाते हैं, उन्हीं के साथ शुद्ध विशेषण लगाया जाता है, जैसे– शुद्ध कल्याण, शुद्ध सारंग एवं शुद्ध मल्हार। शुद्ध सारंग देशभर में दो प्रकार से गाया जाता है। आरोह– नि सा रे मं प नि सां।

अवरोह– सां नि ध प मं प म रे सानि़ सा।

पकड़– रे म रे, रे मं प रे म रे नि, नि सा।

<u>विशेषताएं</u> :–

- इस राग में दोनों मध्यम और शेष स्वर शुद्ध लगते हैं।
- भातखण्डे मत से शुद्ध सारंग में सारंग का प्रयोग करते हैं, दूसरे मत से पूर्वांग में सारंग एवं उत्तरांग में कल्याण का मिश्रण. अधिक मात्रा में किया जाता है, इस मत में प्रायः कोमल निषाद नहीं लगाया जाता है और निध सानि रे सा इस स्वर समूह को मुख्य रूप से प्रयुक्त करते हैं।
- शुद्ध निषाद को मंद्र सप्तक में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है, जबकि कोमल निषाद को महत्व कम दिया गया है।
- आरोह में तीव्र मध्यम और अवरोह में शुद्ध मध्यम का प्रयोग किया जाता है।

<u>स्वर विस्तार</u> :– सा, नि़ सा मरे, रे, नि़ सा, नि सा मरेम – रे, म रे सा नि़, नि़ सा।

सा नि़ ध़ प़, प़ नि़ ध़ सा, नि़ रे, सारे मरे, म रे नि़, नि़ सा रे – सा ।

नि़ सा, रे मरे, मं प, प रे मरे, सा नि, ध प, नि, नि सा, रे में प, रे मं प ध मं प म – रे, म रे नि़ नि़ रे सा।

1.5 विभिन्न स्वर समूह के माध्यम से राग पहचानना

प्रस्तुत इकाई में आपको पाठ्यक्रम के रागों का विस्तृत परिचय बताया गया। अब आपको यह बताया जाएगा कि कुछ स्वर समूहों के माध्यम से आप कैसे राग की पहचान कर सकेंगे।

1.5.1 राग देस – आपने जाना कि राग देस के आरोह में गन्धार तथा धैवत स्वर वर्जित तथा अवरोह में रे स्वर वक्र होने के साथ महत्त्वपूर्ण है तथा दोनों निषाद प्रयुक्त होते हैं। अतः इस राग के मुख्य स्वर समूह इस प्रकार हैं:–

1. रे ग रे प म ग रे –
2. म प नि सां –– रें नि̱ ध प
3. म प नि̱ ध प, प ध म ग रे, ग सा।
4. रे नि –– सा, रे म ग रे ग।

1.5.2 राग शुद्ध कल्याण – कल्याण थाट जन्य इस राग के आरोह में प नि स्वर वर्जित है। तथा प रे की संगति महत्त्वपूर्ण है। कल्याण थाट से उत्पन्न माना जाने के कारण तीव्र मं का अल्प प्रयोग है अतः इसके मुख्य स्वर समूह इस प्रकार हैं:–

1. ग रे – ग [प]रे ग रे सा नि़ ध़ नि़ ध़ प़
2. ग रे सा रे ग प – रे – सा।
3. ग – ग प नि – ध प रे ग प ––
4. सां रें गं,–– सां रें ध –– प

1.5.3 राग शुद्ध शारंग –

अभ्यास प्रश्न

क. रिक्त स्थान भरिए :–

1. राग देश .... थाट से उत्पन्न माना जाता है।
2. शुद्ध सारंग का वादी स्वर .... है।
3. राग देस के आरोह में .... स्वर वर्जित है।
4. शुद्ध सारंग का गायन समय .... है।
5. शुद्ध कल्याण का वादी व सम्वादी स्वर ....व........... है।

ख. एक शब्द में उत्तर दीजिए:–

1. शुद्ध कल्याण राग के आरोह में कौन–कौन से स्वर वर्जित हैं?
2. राग देस का सम्प्रकृति राग कौन सा है?
3. राग शुद्ध सारंग का गायन समय क्या है?
4. राग देश में कोमल स्वर कौन से प्रयुक्त होते हैं?

ग. लघु उत्तरीय प्रश्नः–

अ. निम्नलिखित स्वर समूहों से राग को पहचान कर राग का नाम, आरोह, अवरोह तथा पकड़ लिखिए।

1. प मं ग म ग –– रे सा।
2. म प नि सां नि̱ प।
3. रे ग रे प म ग रे।
4. ग रे सा रे ग प रे – सा।

1.3.3 राग देस :–

विलम्बित ख्याल – एकताल

स्थाई – पैयां परू सीज निपाऊँ पलकन से मग झारू मंदर आवे पी।

अन्तरा – साधो माधो हर जी सौं कहो भोरी, लग रही सुध बुध तन मन ही।

स्थाई

म				ध				नि			
रे	म	प	ध	सांसां	निध	नि	–	ध	प	ध	ग
पै	ऽ	यां	प	रूऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	सी	ऽ	स	नि
3		4		×		0		2		0	
प	म							रे			
मप	धम	रे	–	–	रेग	रे	रे	मम	गरे	ग	रेसा
माऽ	ऽऽ	ऊँ	ऽ	ऽ	पल	क	न	सैऽ	ऽऽ	ऽ	मग
3		4		×		0		2		0	
सा											
रे	नि़	सा	–	रे	ग	म	प,धम	गरे	ग	सारे	नि़सा
झा	ऽ	रू	ऽ	मं	ऽ	द	र,ऽऽ	आऽ	ऽ	वेऽ	पीऽ
3		4		×		0		2		0	

अन्तरा

प											
म	प	नि	सां	रें	रेंगं	रें	सां	रें	नि	सां	सां
सा	धो	मा	धो	ह	रऽ	जी	सौ	क	हो	मो	री
×		0		2		0		3		4	
निसां	निसांरे	सां	निध	प	ध	म	प	म	प	नि	सां
लऽ	गऽऽ	र	हीऽ	सु	ध	बु	ध	त	न	म	न
×		0		2		0		3		4	
गंगं	रेंसां	निध	मप	निध	पम	गरे	गसा				
कोऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ				
×		0		2		0					

मध्यलय ख्याल – त्रिताल

स्थाई – मेहा रे वन वन डार–डार, मुरला बोले, मेहा बोछारन बरसे।
अन्तरा – कारि घटा घन –फिर उमड़ावत पपिहा बोले सदा रंग मनवा लरजे।।

स्थाई

														म	प
														मे	ऽ
सां					नि										
नि	–	सां	–	सां	रें	सां	नि	ध	प	ध	(म)	–	म	प	प
हा	ऽ	रे	ऽ	व	न	व	न	डा	ऽ	र	डा	ऽ	र	मु	र
×				2				0				3			
मप	ध	म	–	रे	–	–	–	सां	–	नि	–	ध	प	म	प
वाऽ	ऽ	बो	ऽ	ले	ऽ	ऽ	ऽ	मे	ऽ	हा	ऽ	ऽ	ऽ	बो	ऽ
×				2				0				3			
ध	–	(म)	ग	म	ग	रे	–	रेग	मप	धप	मग	रेग	सारे	म	प
छा	ऽ	र	न	ब	श्र	से	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	मे	ऽ
×				2				0				3			

अन्तरा

प															
म	–	म	म	प	–	नि	नि	सां	सां	सां	सां	नि	सां	सां	सां
का	ऽ	रि	घ	टा		घ	न	फि	र	उ	म	ड़	ऽ	व	त
×				2				0				3			
गं	गं							नि							
रे	रेग	रें	सां	रें	नि	सां	–	सां	सां	–	नि	–	ध	म	प
प	पिऽ	या	ऽ	बो	ऽ	ले	ऽ	स	दा	ऽ	रं	ऽ	ग	म	न
×				2				0				3			
मप	ध	म	मग	रे	–	–	–	सां	–	नि	–	ध	–	म	प
वाऽ	ऽ	ल	रऽ	जे	ऽ	ऽ	ऽ	मे	ऽ	हा	ऽ	ऽ	ऽ	बो	ऽ
×				2				0				3			
ध	–	(म)	म	म	ग	रे	–	रेग	मप	धप	मग	रेग	सारे	म	प
छा	ऽ	र	न	ब	र	से	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	मे	ऽ
×				2				0				3			

आलाप – स्थाई (8 मात्रा)

1.	हा	ऽ	रे	ऽ	व	न	व	न	रे	नि़	सा	–	रेम	गरे	मे	ऽ
	×				2				0				3			
2.	हा	ऽ	रे	ऽ	व	न	व	न	नि़सा	रेम	गरे	ग	नि़	सा	मे	ऽ
	×				2				0				3			
3.	हा	ऽ	रे	ऽ	व	न	व	न	रेग	मग	रे	–	ग	नि़	सा	मेऽ
	×				2				0				3			
4.	रे	म	प	–	नि	ध	प	–	ध	म	गरे	ग	नि	सा	मे	ऽ
	×				2				0				3			
5.	प	नि	ध	प	रे	म	प	–	रे	म	प	नि	सां	नि	सां	–
	×				2				0				3			

आलाप – अन्तरा (8 मात्रा)

1.	का	ऽ	रि	घ	टा	ऽ	घ	न	रे	म	प	नि	सां	नि	सां	–
	×				2				0				3			
2.	का	ऽ	रि	घ	टा	ऽ	घ	न	सां	नि	ध	प	रेम	पनि	सां	–
	×				2				0				3			
3.	का	ऽ	रि	घ	टा	ऽ	घ	न	रे	म	प	नि	सां	रें	नि	सां
	×				2				0				3			
4.	का	ऽ	रि	घ	टा	ऽ	घ	न	रें	–	गं	–	नि	नि	सां	–
	×				2				0				3			

तानें – स्थाई

1.	सारे	मप	निसां	निध	पध	मग	रेसा	सा–
	×				2			
2.	रेम	पनि	संनि	धप	पध	मग	रेसा	सा–
	×				2			
3.	पध	मग	रेम	पध	मग	रेग	सारे	मप
	×				2			
4.	पध	मग	रेम	पध	पध	मग	रेग	सा–
	×				2			

तानें – अन्तरा

1.	सांनि	सांनि	धप	मप	रेम	रेम	पनि	सां–
	×				2			
2.	मप	निसां	निध	पध	मग	रेम	पनि	सां–
	×				2			
3.	पनि	सांप	निसां	निध	पध	मप	निनि	सां–
	×				2			
4.	पनि	सारें	मंगं	रेंसां	निध	मप	निनि	सां
	×				2			

1.3.5 राग शुद्ध कल्याण :–

विलम्बित ख्याल – एकताल

स्थाई – बोलन लगी पपीहरा, ननदी मैका भवन न भावे,

अन्तरा –मोरे सैंय्या कछु संदेसवा न भेजो, अधिक सोच जिया अति ही अकुलावे ।।

स्थाई

ग		प									
प	ग	गम	मंपधप	रे	–	सा	–सा	प	ग	–	प
बो	ऽ	ऽल	ऽऽऽन	ला	ऽ	गी	ऽप	पी	ऽ	ऽ	हा
3		4		×		0		2		0	
रे	गमंप	प	मंग	ध	प	ग	रे	प	रे	सा	–
ऽ	ऽऽऽ	री	ऽऽ	न	न	दी	ऽ	मै	ऽ	का	ऽ
3		4		×		0		2		0	
रे	सा	ध़	प़	प	ग	–	प	रे	–	सा	–
भ	व	न	न	भा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	वे	ऽ
3		4		×		0		2		0	

<u>अन्तरा</u>

प	ग	प	सांध	सां	सां	सां	सां	सां	रें	गं	रें
मो	रे	सै	ऽऽ	या	ऽ	क	छु	सं	दे	ऽ	स
3		4		×		0		2		0	
सां	निध	निध	प	प	ग	प	रे	–	सा	रे	सा
वा	नऽ	भेऽ	जो	अ	धि	क	सां	ऽ	च	जि	या
3		4		×		0		2		0	
सां	गंगं	(सां)	–	प	ग	–	रे	–	सा	गग	सा
अ	तिऽ	ही	ऽ	अ	कु	ऽ	ला	ऽ	ऽ	ऽऽ	वे
3		4		×		0		2		0	

<u>**आलाप – स्थाई**</u>

1.	बो	ऽ	ऽल	ऽऽऽन	ला	सा	रे	ध़	ध़	प़	ध़	सा
	3		4		×		0		2		0	
2.	बो	ऽ	ऽल	ऽऽऽन	सा	रे	ग	रे	सा	ध़	ध़	सा
	3		4		×		0		2		0	
3.	बो	ऽ	ऽल	ऽऽऽन	सारे	गप	धध	प	रेग	सारे	ध़ध़	सा
	3		4		×		0		2		0	
4.	बो	ऽ	ऽल	ऽऽऽन	गरे	गप	–	रेग	सारे	ध़ध़	प़ध़	सा
	3		4		×		0		2		0	
5.	बो	ऽ	ऽल	ऽऽऽन	प	ध	प	गरे	ग	प	ध	सां
	3		4		×		0		2		0	

<u>आलाप – अन्तरा</u>

1.	मो	रे	सैं	ऽऽ	या	ऽ	सां	रें	ध	प	ध	सां
	3		4		×		0		2		0	
2.	मो	रे	सैं	ऽऽ	सां	निध	प	म॑प	गप	ध	ध	सां
	3		4		×		0		2		0	
3.	मो	रे	सैं	ऽऽ	गं	रें	सारें	धध	प	गप	ध	सां
	3		4		×		0		2		0	

तानें

1.	सासारेगपमंगरे	सासारेगपधपमं	गरेसासारेगपध	निधपमंगरेगरे
	सासारेगपधसांरें	गंरेंसांसांनिधपम	गपगरेसासारेग	पधसांरेंगंपंगंप
	गंरेंसांसांसांरेंसांसां	निधपमंगरेसा–	बोऽलऽऽऽन	ला
				×
2.	सारेगगरेगगरे	गगरेसासारेगप	धधपधधपगप	धसांसांरेंगंगंरेंगं
	गंरेंगंगंरेंसांसांरें	सांसांधपगपधप	धसांरेंसांधपगप	धसांधपगपधप
	गपसारेसारेगरे	गपधपगरेसा–	बोऽलऽऽन	ला
				×

मध्यलय ख्याल – तीनताल

स्थाई – बाजो रे बाजो मंदलरा, सुधर–सुधर नर–नारी मिलक रही,
आनन्द रहस रस गावे छूँ मंगलरा।

अन्तरा – एक समधिन संग चौक पुरावो एक समधिन गर डारो हि हरवा,
एक हँस हँस पिस लावो संदलरा।।

स्थाई

रे	सा	ध़सा	रेसा	,प	–	–	–	प़	स	–	रे	ग	रे	सा	–
ऽ	जो	ऽऽ	ऽरे	बा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	जो		मं	द	ल	रा	ऽ
3				×				2				0			
प	ध़	प़	ग	ग	ग	ग	ग	ग	ग	ग	रे	प	म	प	–
सु	घ	र	सु	घ	र	न	र	ना	री	मि	ल	क	र	ही	ऽ
3				×				2				0			
ध़	ध़	प	प	प	ग	ग	प	ग	रे	सा	रे	ग	रे	सा	सा
आ	नं	द	र	ह	स	र	स	गा	वे	छूँ	मं	द	ल	रा	वा
3				×				2				0			

अन्तरा

प	प	प	ग	प	प	सां	ध	सां	–	सां	सां	सां	रें	सां	–
ए	क	स	म	धि	न	सं	ग	चौ	ऽ	क	पु	रा	ऽ	वो	ऽ
3				×				2				0			
सां	सां	सां	ध	सां	सां	सां	सां	सां	रें	गं	रें	सां	रें	सां	ध
ए	क	स	म	धि	न	ग	र	डा	ऽ	रो	हि	ह	र	वा	ऽ
3				×				2				0			
प	ग	ग	ग	प	प	ध	प	पपधनि	संरेंसांनि	सा	धप	ग	रे	सा	ग
ए	क	ह	स	ह	स	धि	स	लाऽऽऽ	ऽऽऽऽ	वो	सऽ	द	ल	रा	बा
3				×				2				0			

तानें – स्थाई

1.	सारे	गप	धसां	रेंसां	निध	पमं	गरे	सा–
	2				0			
2.	गरे	गप	धसां	रेंसां	निध	पमं	गरे	सा–
	2				0			
3.	सारे	गरे	गप	गप	धसां	धप	गरे	सा–
	2				0			
4.	गप	धसां	रेंगं	रेंसां	निध	पमं	गरे	सा–
	2				0			
5.	गप	गप	धसां	धप	गप	धप	गरे	सा–
6.	सारे	गरे	गप	गप	गप	धसां	सांरें	सांनि
	2				0			
	धप	गप	धसां	रेंसां	निध	पमं	गरे	सा–
	3				×			

तानें – अन्तरा

1.	सांरें	सांनि	धप	गप	गप	धध	सांरें	सां–
	2				0			
2.	गंरें	गंरें	सांनि	धप	गप	धप	सांसां	रेंसां
	2				0			
3.	सांरें	सांसां	धसां	धप	गप	गप	धध	सां–
	2				0			
4.	गंरें	सांरें	धसां	धप	गप	गप	धध	सां–
	2				0			

राग शुद्ध सारंग विलंबित एक ताल

स्वर विस्तार

(१) सा, नि सामरे, रे, नि सा, नि सा मरेम रे, म रे सा नि़, नि़ सा।

(२) सा नि़धप़, प़ नि़ ध़ सा, नि़ रे, सारे मरे, म रे नि़, नि़ सा रे – सा ।

(३) नि़ सा, रे मरे, मं प, परे मरे, सा नि़, ध़ प़, नि़, नि़ सा, रे में प, रे मं पधर्मपम – रे, मरे नि़नि़ रे सा ।

स्थाई

आन परी मजधार, बिन तुम्हारे लगावे को पार।

अंतरा

नदिया गहरी नैया पुरानी मोरी, आज आयो शरण तिहार।

स्थाई

सा	ध़ म	म सा	प		प	प	म	रे		नि़	
नि़सा	नि़सा,रेप	रेम,रे,	, मंमं	प ,	मंप	मंपध–	प(प)	म	रे	सा(सा)	नि़
आऽ	ऽऽ,नप	रीऽ,ऽ	,मज	धा,	,ऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	रे
3		4		×		0		2		0	
प़	स		नि़	म	प			प			
मंप़,	,नि़नि़	सा	,सा	रे	मं	प	मप	मंपमंप	निसां–नि	(प)म	रेसा;
बिन	,तुम्ह	रे	,ल	गा	ऽ	वे	ऽऽ	कोऽऽऽ	ऽऽऽऽ	पाऽ	ऽर;
3		4		×		0		2		0	
सा	ध़ म	म सा	प								
नि़सा	नि़सा,रेप	रेम,रे,	,मम	प ,							
आऽ	ऽऽ,नप	रीऽ,ऽ	,मज	धा,							
3		4		×							

अंतरा

नि			प			निमं				मं	मं
सांनि	(प)	मरे	, मंप	सां	,निसां	सारें	मं,रें	सां	नि	प,मंपध	प(प)
नदि	या	ऽऽ	,गह	री	,ऽऽ	नैया	ऽ,पु	रा	ऽ	नी,ऽऽऽ	मोऽ
3		4		×		0		2		0	
		नि़		प़		स	म	प		नि़	नि़
म	रे	सा(सा)	नि़	मंप़	–प़	नि़सा	रेमंपपनिसां–	नि॒प	मं,(प)	मरे	सा(सा),सा;
				प़							
रे	ऽ	ऽऽ	ऽ	आऽ	ऽज	आऽ	योऽऽऽऽऽ	शर	ण,ति	हाऽ	ऽऽ,र;
3		4		×		0		2		0	

आलाप

1— नि—सा, निसारे, रेमरे, नि—सा।

2— रेमंप, मंप मरे, मरेनि, निसा ।

3— रेमप, मंप धप, मंप मरे, मरेनिसा ।

4— रेमंप निनि, मंपनिनि, निधपमंप निधप, मरेसानिसा।

5— पनिनि सांनिप, मॅपसांनिप, मंपनिसां ।

6— निसारेंसां, सारेंरेंमंरेंनिसां, निप मंपनिसां।

तान

ऩिसारेमपनिसांरे	सांनिधपरेमरेसा	रेमरेमरेमरेसा	सांनिधपमंपरेम	रेसाऩिसारेमरेसा	ऩिसारेमरेसाऩिसा
0		2		0	
ऩिऩिसासारेरेऩिनि	सासारेरेरेरेमम	पपममपपनिन	पपनिनिसांसांसांनि	धपमंपरेमरेसा	ऩिसारेमरेसाऩिसा
0		2		0	
ऩिसारेमरेसाऩिसा	ऩिसारेमंपपरेम	रेसाऩिसाऩिसारेम	पधमंपरेमरेसा	पधमपरेमरेसा	पधमंपरेमरेसा
0		2		0	
ऩिसारेसाऩिसारेम	रेसाऩिसारेमंप ध	मंपरेमरेसाऩिसा	सारेंसांनिधपमंप	मंपनिनधपमप	ऩिसारेमरेसाऩिसा
0		2		0	

राग शुद्ध सारंग द्रत बंदिश (तीन ताल)

स्थाई

अब मोरी बात मान ले पियरवा, जाऊँ मैं तोपे वारि वारि।

अंतरा

प्रेम पिया हमसे नहिं बोलत, बिनती करत मैं तो हारि हारि हारि।।

स्थाई

															म अ
रे	ऩि	—	सा	ऩि	—	प़	—	ऩि	ध़	सा	ऩि	रे	सा	—	रे
ब	मो	ऽ	रि	बा	ऽ	ऽ	ऽ	बा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	त	ऽ	मा
3				×				2				0			
मं	प	नि	सां	नि	—	—	प	नि	—	—	मं	प	रे	—	रे
न	ले	ऽ	पि	न	य	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	र	वा	ऽ	जा
3				×				2				0			
मं	प	नि	सां	पनि	सांरे	सां	प—	ध—	प	रे	म	रे	ऩि	सा,	म
ऊ	मैं	तो	पै	वाऽ	ऽऽ	रि	वाऽ	ऽऽ	रि	वा	ऽ	रि	वा	रि,	वा
3				×				2				0			

अंतरा

प	–	नि	नि	सां	सां	सां	सां	रें	मं	रें	सां	सां	(सां	नि	नि
प्रे	ऽ	म	पि	या	ऽ	ह	म	से	ऽ	न	हिं	बो	ऽ	ल	त
3				×				2				0			
प	नि	सां	रें	सां	निध	म॑	प	निसां	रें	सां	प–	ध	प	रे	म
बि	न	ति	क	र	तऽ	मैं	तो	हाऽ	ऽ	री	हाऽ	ऽ	रि	हा	ऽ
3				×					2			0			
रे	ऩि	सां,	म												
री	हा	री,	अ												
3															

तान (स्थायी)

निसा रेम पप म॑प	रेम रेसा निसा।
2	0
ऩिध साऩि रे– ऩिसा	रेम रेसा निसा ।
2	0
पप म॑प रेम रेसा	ऩिध़ साऩि रे–।
2	0
रेम पनि सांनि धप	म॑प रेम रेसा।
2	0
पनि सारें सांनि धप	म॑प रेम रेसा।
2	0
निध सांनि रेंसां निध	पप रेम रेसा।
2	0
रेम॑प रेम॑प रेम॑प निसा	पनिसां पनि सारें सांनि
2	0
धप म॑प रेम रेसा	निध सानि रे– निध
3	4
सानि रे–निध सानि रे–।	

तान (अंतरा)

1. सांनि धप रेम रेसा — निसा रेम पनि सां।
2. सारें सांनि धप म॑प — रेम पनि पनि सां।
3. निसां रेंसां निसां रेंमं — रेंसां निसां रेंसां निसां।
4. सांनि धप निनि धप — सारें सांनि धप निसां
   रेंमं रेंसां निनि धप — म॑प रेम रेसा ऩिसा
   रेम॑ परे म॑प पनि — पनि सांप निसां निसां।

अभ्यास प्रश्न

क. एक शब्द में उत्तर दीजिए:–

1. एकताल में कौन से ख्याल गाए जा सकते हैं?
2. तीनताल में कितनी मात्राएं तथा विभाग होते हैं?

ख. लघु उत्तरीय प्रश्नः–

1. पाठ्यक्रम के किसी एक राग में मध्यलय ख्याल को तानों सहित लिपिबद्ध कीजिए।

1.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप स्वरों की स्वरलिपि को पढ़ सकेंगे एवं उनका क्रियात्मक रूप से गायन करने में सक्षम होंगे। ख्याल गायन के अन्तर्गत आने वाले बड़े ख्याल व छोटे ख्याल की रचनाएँ आपके पाठ्यक्रम के रागों में दी गई हैं। इन रागों का तानों के द्वारा विस्तार भी किया गया है जिससे आप राग में अन्य तानों को स्वयं बनाने में भी सक्षम होंगे एवं आप अपने पाठ्यक्रम के रागों का ख्याल गायन शैली में गायन प्रस्तुत कर सकेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप राग की अन्य रचनाओं की स्वरलिपि को भी समझ कर गा सकने में सक्षम होंगे।

1.7 शब्दावली

- स्थायित्व – सर्वकालिक
- क्रियात्मक – व्यवहारिक/प्रयोगात्मक
- दीर्घ – बड़ा
- विवादी – जिस स्वर को लगाने से राग की हानि होती है, किन्तु कुशलता से कभी राग की सुन्दरता बढाने हेतु गाया जाता है।
- अल्प – थोड़ा/कम
- न्यास – ठहराना
- वक्र – स्वरों को बिना चक्र के प्रयोग (जैसे– सा ग रे म ग)
- मींड – एक स्वर से दूसरे स्वर में झूमते हुए आने की मीड़ कहते हैं।

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.3 :–

ख. सत्य अथवा असत्य लिखिए :–

1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य 4. सत्य

1.4 व 1.5 :–

क. रिक्त स्थान भरिए:–

1. बिलावल 2. मध्यम 3. ग, ध 4. मध्यान्ह काल 5. गन्धार, धैवत।

ख. एक शब्द में उत्तर दीजिए:–

1. म, नि 2. तिलककामोद, सोरठ 3. रात्रि का दूसरा प्रहर 4. ग, नि स्वर कोमल

ग. लघु उत्तरीय प्रश्नः–

अ. –1. बिहाग 2. बागेश्री 3. वृन्दावनी सारंग 4. देस 5. शुद्ध कल्याण।

1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गर्ग, प्रभुलाल(बसन्त), संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. श्रीवास्तव हरीशचन्द्र, राग परिचय भाग–2, 3।
3. द्विवेदी, रामाकान्त, संगीत स्वरित।
4. भातखण्डे, विष्णु नारायण, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग – 3, 4।

1.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. संगीत, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. झा, रामाश्रय, अभिनव गीतान्जली।
3. परांजपे, डॉ0 शरदचन्द्र श्रीधर, संगीत बोध।

1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. **राग** देश तथा शुद्ध सारंग राग का पूर्ण परिचय लिखिए।
2. **राग शुद्ध कल्याण राग की स्वरलिपि लिखिए।**

इकाई 6 – पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद, दुगुन व चौगुन लयकारी सहित लिपिबद्ध करना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद लयकारियों सहित
    2.3.1 राग देस में ध्रुपद लयकारियों सहित
    2.3.2 राग शुद्ध कल्याण में ध्रुपद लयकारियों सहित
    2.3.3 राग शुद्ध सारंग में ध्रुपद लयकारियों सहित
2.4 सारांश
2.5 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.7 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम(बी0ए0एम0वी0 एन0–202) के प्रथम खण्ड षष्ठम् इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप विष्णु दिगम्बर प्लुस्कर पद्धति से परिचित हो चुके होंगे। आप संगीतज्ञों के जीवन से भी परिचित हो चुके होंगे। आप पाठ्यक्रम के रागों तथा उनकी बन्दिशों को भी जान चुके होंगे।

इस इकाई में पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद लिपिबद्ध किए गए हैं। पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद को लयकारी में लिपिबद्ध करना भी प्रस्तुत इकाई में सविस्तार समझाया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद की रचनाओं को जान सकेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह भी जान सकेंगे कि ध्रुपद की रचनाओं को लयकारी में किस तरह लिपिबद्ध किया जाता है।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

- पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद की रचनाओं को जान सकेंगे।
- जान सकेंगे कि ध्रुपद की रचनाओं को लयकारी में किस तरह लिपिबद्ध किया जाता है।
- अन्य रागों में ध्रुपद की रचनाओं को लयकारी में लिख सकने में सक्षम हो सकेंगे।

2.3 पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद लयकारियों सहित

2.3.1 राग देस में ध्रुपद लयकारियों सहित :–

ध्रुपद – चौताल

स्थाई – लोचन रूत लाल भये प्यारी पत के समीप जागे मानो कंवल खिले उदे भये भान।
अन्तरा – ठाडी ग्रह कर किवाड रंग भँवर अपने द्वार जैसे धन बादल विच चमकत तर तान।।

स्थाई

				प		सां					
–	रे	म	प	नि	प	नि	सां	–	सांनि	रें	नि
ऽ	लो	ऽ	च	न	ऽ	रू	त	ऽ	लाऽ	ऽ	ल
0		3		4		×		0		2	
							प	प	म		
ध	प	–	पध	सांध	सां	नि	ध	म	रे	–	प
भ	ये	ऽ	प्याऽ	रीऽ	ऽ	ऽ	प	त	के	ऽ	स
0		3		4		×		0		2	
सा								सां	सां		
म	गरे	ग	नि़	सा	सा	–	नि़	सा	रे	–	म
मी	ऽऽ	प	ज	ऽ	गे	ऽ	मा	ऽ	जो	ऽ	कं
0		3		4		×		0		2	

	प					नि			प	प	
प	नि	प	नि	सां	–	सां	रें	नि़	ध	म	गरे
व	ल	ऽ	खि	ले	ऽ	उ	दे	ऽ	भ	ये	भा
0		3		4		×		0		2	
ग	सा	–	रे	मप	निप						
ऽ	न	ऽ,	लो	ऽच	नऽ						
0		3		4							

अन्तरा

सां											
रें	–	रें	–	नि	नि	नि	नि	सां	सां	–	सां
ठा	ऽ	डी	ऽ	ग्र	ह	क	र	कि	वा	ऽ	ड
×		0		2		0		3		4	
नि	प	–	नि	सां	सां	रें	सां	रें	नि	ध	प
रं	ग	ऽ	भं	व	र	अ	प	ने	हा	ऽ	र
×		0		2		0		3		4	
रें	–	रें	–	सां	सां	नि	प	नि	नि	सां	सं
जै	ऽ	से	ऽ	घ	न	बा	ऽ	द	ल	बि	च
×		0		2		0		3		4	

रें	नि	ध	प	ध	म	गरे	ग	सा	रे	मप	निप
च	म	क	त	त	र	ताऽ	ऽ	न,	लो	ऽच	नऽ
×		0		2		0		3		4	

स्थाई – दुगुन

–	रे	म	–रे	मप	निप
ऽ	लो	ऽ	ऽलो	ऽच	नऽ
0		3		4	
निसां	–सांनि	रेंनि	धप	–पध	सांधसां
रूत	ऽलाऽ	ऽल	भये	ऽप्याऽर	रीऽऽ
×		0		2	
निध	मरे	–प	मगरे	गनि	सासा
ऽप	तके	ऽस	मीऽऽ	पजा	ऽगे
0		3		4	
–नि	सारे	–म	पनि	पनि	सां–
ऽमा	ऽनो	ऽकं	वल	ऽखि	लेऽ
×		0		2	
सारें	निध	मगरे	गसा	–रे	मपनिप
उदे	ऽभ	येमीऽ	ऽन	ऽलो	ऽचनऽ
0		3		4	

स्थाई – तिगुन

–रेम	पनिप	निसां–	सांनिरेंनि	धप–	पधसांधसां
ऽलोऽ	चनऽ	कतऽ	लाऽऽल	भयेऽ	प्याऽरीऽऽ
0		3		4	
निधम	रे–प	मगरेग	निसासा	–निसा	रे–म
ऽपत	केऽस	मीऽऽप	जाऽगे	ऽमाऽ	नोऽकं
×		0		2	
पनिध	निसां–	सारेंनि	धमगरे	गसाऽ	रेमपनिप
वलऽ	खिलेऽ	उदेऽ	भयेमाऽ	ऽवऽ	लोऽचनऽ
0		3		4	

स्थाई – चौगुन

–	रे	म	प	12–रे	मपनिप
ऽ	लो	ऽ	च	12ऽलो	ऽचनऽ
0		3		4	
निसां–सांनि	रेनिधप	–पधसांधसां	निधमेर	–पमगरे	गनिसासा
रूतऽलाऽ	ऽलभए	ऽप्याऽरीऽऽ	ऽपतके	ऽसमीऽऽ	पजाऽगे
×		0		2	
–निसारें	–मपनि	पनिसां–	सारेंनिध	मगरेगसा	–रेमपनिप
ऽमाऽनो	ऽकंवल	ऽखिलेऽ	उदेऽभ	एभाऽऽन	ऽलोऽचनऽ
0		3		4	

अन्तरा – दुगुन

रें–	रें–	निनि	निनि	सांसां	–सां
ठाऽ	डीऽ	ग्रह	कर	किवा	ऽऽ
×		0		2	

निप	–नि	सांसां	रेंसा	रेंनि	धप
रंग	ऽभं	वर	अप	नेद्वा	ऽर
0		3		4	
रें–	रें–	सांसां	निप	निनि	सांसां
जैऽ	सेऽ	घन	बाऽ	दल	बिच
×		0		2	
रेनि	धप	धम	गरेग	सारे	मपनिप
चम	कत	तर	ताऽऽ	न,लो	ऽचनऽ
0		3		4	

अन्तरा – तिगुन

रें	–	रें	–	नि	नि
ठा	ऽ	डी	ऽ	ग्र	ळ
×		0		2	
नि	नि	रें–रें	–निनि	निनिनि	सां–सां
क	र	ठाऽडी	ऽग्रह	करकि	वाऽऽ
0		3		4	
निप–	निसांसां	रेंसांरें	निधप	रें–रें	–सांसां
रंमऽ	भंवर	अपने	द्वाऽर	जैऽसे	ऽघन
×		0		2	
निपनि	निसांसां	रेंनिध	पधप	गरेगसा	रेमपनिप
बाऽद	लबिच	चमक	ततर	तऽऽन	लोऽचनऽ
0		3		4	

अन्तरा – चौगुन

रें–रें–	निनिनिनि	सांसां–सां	निप–नि	सांसांरेंसां	रेंनिधप
ठाऽडीऽ	ग्रहकर	किवाऽऽ	रंगऽभ	वरअप	नेद्वारऽर
×		0		2	
रें–रें–	सांसांनिप	निनिसांसां	रेंनिधप	धमगरेग	सारेमपनिप
जैऽसेऽ	घनवाऽ	दलविच	चमकत	तरताऽऽ	नलोऽचनऽ
0		3		4	

2.3.2 राग शुद्धकल्याण में ध्रुपद लयकारियों सहित :–

ध्रुपद – चौताल

स्थाई – धर रे मन धर तू मित, प्रभु के दृढ़ चरन कमल।
इस दम को का भरो सो, सोच समझ अब ते मन।

अन्तरा – राव रंक जीव जंत, जाय चतुर एक अंत
ना मोटो छोटो जहाँ मन।

स्थाई

सा

ग	रे	सा	रे	सा	सा	**सा**	निध़	नि़	ध़	प़	प
ध	र	रे	ऽ	म	न	ध	रऽ	तू	ऽ	नि	त
×		0		2		0		3		4	

सा	सा	ग	—	ग	रे	ग	ग	प	रे	सा	सा
प्र	भु	के	ऽ	दृ	ढ़	च	र	न	क	म	ल
×		0		2		0		3		4	
सा	सा	ग	रे	ग	—	ग	—	गरे	प	—	गरे
इ	स	द	म	को	ऽ	का	ऽ	भऽ	रो	ऽ	सोऽ
×		0		2		0		3		4	
सा	रे	ग	रे	सा	रे	ग	रे	सा	रेध़	सा	सारे
सो	ऽ	च	स	म	झ	अ	ब	तू	ऽऽ	ऽ	मन
×		0		2		0		3		4	

अन्तरा

प	—	प	सां	—	सां	सां	—	सां	सं	रें	सां
रा	ऽ	व	रं	ऽ	क	जी	ऽ	व	ज़ं	ऽ	त
×		0		2		0		3		4	
सां	—	रें	रें	गं	रें	सां	—	निध	थ्न	ध	प
जा	ऽ	य	च	तु	र	ए	ऽ	कऽ	टं	ऽ	त
×		0		2		0		3		4	
प	—	ध	रें	सां	—	ग	रे	ग	रे	सा	सारे
ना	ऽ	मो	ऽ	हो	ऽ	छो	ऽ	टो	ज	हाँ	मन
×		0		2		0		3		4	

स्थाई – दुगुन

गरे	सारे	सासा	सानि़ध़	नि़ध़	प़प़
धर	रेऽ	मन	धरऽ	तूऽ	थ्नत
×		0		2	
सासा	ग—	गरे	गग	परे	सासा
प्रभु	केऽ	दृढ़	चर	नक	म्ल
0		3		4	
सासा	गरे	ग—	ग—	गरेप	—गरे
इस	दम	कोऽ	काऽ	भऽरो	ऽसोऽ
×		0		2	
सारे	गरे	सारे	गरे	सारेध़	सासारे
सोऽ	चस	मझ	अब	तूऽऽ	ऽमन
0		3		4	

स्थाई – तिगुन

ग	रे	सा	रे	सा	स
ध	र	रे	ऽ	म	न
×		0		2	
सा	नि़ध़	गरेसा	रेसासा	सानि़धनि़	ध़प़प़
ध	रऽ	धररे	ऽमन	धरऽतू	ऽनित
0		3		4	
सासाग	—गरे	गमप	रेसासा	सासाग	रेग—
प्रभुके	ऽदृढ़	चरन	कमल	इसद	नकोऽ
×		0		2	
ग—गरे	प—गरे	सारेग	रेसारे	गरेसा	रेध़सासारे
काऽभऽ	रोऽसोऽ	सोऽच	समझ	अबतू	ऽऽऽमन
0		3		4	

स्थाई – चौगुन

गरेसारे	सासासानि़ध़	नि़ध़प़प़	सासाग–	ग्रेगग	परेसासा
धररेऽ	मनधरऽ	तूऽनित	प्रभुकेऽ	दृढ़चर	नकमल
×		0		2	
सासागरे	ग–ग–	गरेप–गरे	सारेगरे	सरेगरे	सारेध़सासारे
इसदम	कोऽकाऽ	भऽरोऽसोऽ	सोऽचस	मझअब	तूऽऽऽमन
0		3		4	

अन्तरा – दुगुन

प	–	प	सां	–	सं
रा	ऽ	व	र	ऽ	क
×		0		2	
प–	पसां	–सां	सां–	सांसां	रेंसां
राऽ	वरं	ऽक	जीऽ	वजं	ऽत
0		3		4	
सां–	रेंरें	गरें	सां–	निधनि	धप
जाऽ	यच	तुर	ए ऽ	कऽअं	ऽत
×		0		2	
प–	धरें	सां–	गरें	गरें	सासारे
नाऽ	मोऽ	टोऽ	छोऽ	टोज	हाँमन
0		3		4	

अन्तरा – तिगुन

प–प	सां–सां	सां–सां	सारेंसां	सां–रें	रेंगरें
राऽव	रंऽक	जीऽव	जंऽत	जाऽय	चतुर
×		0		2	
सां–निध	निधप	प–ध	रेंसां–	गरेंगं	रेसासारे
ए ऽकऽ	अंऽत	नाऽमो	ऽटोऽ	छोऽटो	जहाँमन
0		3		4	

अन्तरा – चौगुन

प	–	प	प–पसां	–सांसां–	सांसांरेंसां
रा	ऽ	व	राऽवर	ऽकजीऽ	वजंऽत
×		0		2	
सां–रेंरें	गरेंसा–	निधनिधप	प–धरें	सां–गरें	गरेंसासारे
जाऽयच	तुरए ऽ	कऽअंऽत	नाऽमोऽ	टोऽछोऽ	टोजहाँमन
0		3		4	

राग शुद्ध सारंग– चौताल

स्थाई– निरंजन निराकार, निरूपम नहिं कोउ समान।
निर्गुन अरू सगुन होत, रमें रहत सबन में।।

अन्तरा–निज–जन प्रहलाद काज, प्रगटे प्रभु फारि खम्भ।
रूप धरि नरसिंह, असुर मारे छिन में।।

राग शुद्ध सारंग– चौताल

स्थाई– निरंजन निराकार, निरूपम नहिं कोउ समान।
निर्गुन अरू सगुन होत, रमें रहत सबन में।।

स्थाई

म	रे	सा	नि़	ध़	प़	नि़	सा	—	रे	—	सा
नि	रं	ऽ	ज	ऽ	न	नि	रा	ऽ	का	ऽ	र
×		0		2		0		3		4	
नि़	सा	रे	म	प	प	ध	म	प	म	रे	रे
नि	रू	प	म	न	हिं	को	उ	स	मा	ऽ	न
×		0		2		0		3		4	
रे	म	प	प	नि	सां	सां	नि	ध	प	म	प
नि	र	गु	न	अ	रू	स	गु	न	हो	ऽ	त
×		0		2		0		3		4	
नि	ध	प	ध	म	प	रे	म	रे	नि़	सा	—
र	में	ऽ	र	ह	त	स	ब	न	में	ऽ	ऽ
×		0		2		0		3		4	

स्थाई दुगुन – सम से

मरे	सानि़	–रे	नि़सा	–रे	–सा
निरं	ऽज	ऽन	निरा	ऽका	ऽर
×		0		2	
नि़सा	रेम	पप	धम	पम	रेरे
निरू	पम	नहिं	कोउ	सम	ऽन
0		3		4	
रेम	पप	निसां	सांनि	संनि	मप
निर	गुन	अरू	सगु	न्हो	ऽत
×		0		2	
निध	पध	म्प	रेम	रेनि़	सा–
रमें	ऽर	हत	सब	नमें	ऽऽ
0		3		4	

तिगुन 9वीं मात्रा से

म	रे	स	नि़	ध़	प़
नि	रं	ऽ	ज	ऽ	न
×		0		2	
नि़	सा	मरेसा	नि़–रे	नि़सा–	रे–सा
नि	रा	निरंऽ	जऽन	निराऽ	काऽर
0		3		4	
नि़सारे	मपप	धमप	मरेरे	रेमप	पनिसां
निरूप	मनहिं	कोउस	मऽन	निरगु	नअरू
×		0		2	
सांनिसा	निमप	निधप	धमप	रेमरे	नि़सा–
सगुन	होऽत	रमेंऽ	रहत	सबन	मेंऽऽ
0		3		4	

चौगुन सम से

मरेसानि़	–रेनि़सा	–रे–सा	नि़सारेम	पपधम	पमरेरे
निरंऽज	ऽननिरा	ऽकाऽर	निरूपम	नहिंकोउ	समऽन
×		0		2	
रेमपप	निसांसांनि	सांनिमप	निधपध	मपरेम	रेनि़सा–
निरगुन	अरूसगु	नहोऽत	रमेंऽर	हतसब	नमेंऽऽ
0		3		4	

अन्तरा–निज–जन प्रहलाद काज, प्रगटे प्रभु फारि खम्भ।
रूप धरि नरसिंह, असुर मारे छिन में।।

अन्तरा

प	प	नि	सां	सां	सां	सां	–	सां	सां	रें	सां
नि	ज	ज	न	प्र	ह	ला	ऽ	द	का	ऽ	ज
×		0		2		0		3		4	
नि	सां	रे	मं	रें	सां	नि	–	सां	नि	प	प
प्र	ग	टे	ऽ	प्र	भु	फा	ऽ	रि	खं	ऽ	भ
×		0		2		0		3		4	
रे	म	रे	सा	सा	–	रे	म	प	नि	सां	सां

रू	ऽ	प	ध	रे	ऽ	न	र	ऽ	सिं	ऽ	ह
×		0		2		0		3		4	
नि	ध	प	ध	म	प	रे	म	रे	ऩि	सा	–
अ	सु	र	मा	ऽ	रे	छि	न	ऽ	में	ऽ	ऽ
×		0		2		0		3		4	

<u>अन्तरा – दुगुन सम से</u>

पप	निसां	निसां	सांसां	दका	ऽज
निज	जन	प्रह	लाऽ	किवा	ऽऽ
×		0		2	
रेंसां	रेंमं	रेंसां	नि–	सांनि	पप
प्रग	टेऽ	प्रभु	फाऽ	रिखं	ऽभ
0		3		4	
रेम	रेसा	सा–	रेम	पनि	सांसां
रूऽ	पध	रेऽ	नर	ऽसिं	ऽह
×		0		2	
निध	पध	धम	रेम	रेनि	सा–
असु	रमा	ऽरे	छिन	ऽमें	ऽऽ
0		3		4	

<u>अन्तरा – तिगुन 9वीं मात्रा से</u>

प	प	नि	सां	सां	सं
नि	ज	ज	न	प्र	ह
×		0		2	
सां	–	पपनि	सांसांसां	सां–सां	सारेंसां
ला	ऽ	निजज	नप्रह	लाऽद	काऽज
0		3		4	
निसारें	मंरेंसां	नि–सां	निपप	रेमरे	सासा–
प्रगटे	ऽप्रभु	फाऽरि	खंऽभ	रूऽप	धरेऽ
×		0		2	
निधप	रेमप	नसांसां	धमप	रेमरे	ऩिसा–
नरऽ	सिंऽह	असुर	माऽरे	छिनऽ	मेंऽऽ
0		3		4	

<u>अन्तरा – चौगुन सम से</u>

पपनिसां	सांसांसां—	सांसांरेंसां	निसांरेंमं	रेंसांनि—	संनिपप
निजजन	प्रहलाऽ	दकाऽज	प्रगटेऽ	प्रभुफाऽ	रिखंऽभ
×		0		2	
रेमरेसा	सा—रेम	पनिसांसा	निधपध	मपरेम	रेनि़सा—
रूऽपध	रेऽनर	ऽसिंऽह	असुरमा	ऽरेछिन	ऽमेंऽऽ
0		3		4	

अभ्यास प्रश्न

क. लघु उत्तरीय प्रश्नः—

1. राग देश में एक ध्रुपद लिपिबद्ध कीजिए।
2. राग शुद्ध कल्याण में एक ध्रुपद दुगुन एवं चौगुन लयकारी सहित लिपिबद्ध कीजिए।

2.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम के विभिन्न रागों में ध्रुपद की बन्दिशों को जान चुके होंगे। आप विभिन्न रागों में ध्रुपद को लिपिबद्ध करना भी सीख चुके होंगे। पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद की दुगुन, तिगुन व चौगुन लयकारी भी लिपिबद्ध कर बतायी गई है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह भी जान चुके होंगे कि इन रागों में ध्रुपद की विभिन्न लयकारीयों जैसे दुगुन, तिगुन व चौगुन को कैसे लिपिबद्ध किया जाता है। आप रागबद्ध रचनाओं को सुनकर स्वंय उन्हें लिपिबद्ध कर सकेंगे तथा लयकारियों को प्रस्तुत कर सकेंगे।

2.5 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पंडित विष्णु नारायण, (1970), *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 1 एवं भाग 2,* संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. झा, पंडित रामाश्रय, (2001), *अभिनव गीतांजली भाग–IV*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

2.6 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, *राग परिचय भाग 1 तथा 2,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र (1993), *मधुर स्वर लिपि संग्रह भाग 1 एवं 2,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

2.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम के किन्हीं दो रागों में ध्रुपद को लयकारियों सहित लिपिबद्ध कीजिए।

इकाई 7 – पाठ्यक्रम की तालों आडाचारताल एवं गजझम्पा ताल ताल का परिचय एवं बोल समूह द्वारा ताल पहचानना, पाठ्यक्रम की तालों आडाचारताल एवं गजझम्पा ताल के ठेकों को दुगुन, तिगुन एवं चौगुन लयकारी सहित लिपिबद्ध करना।

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 पाठ्यक्रम की तालों का परिचय

6.3.1 आडाचारताल का परिचय

6.3.2 गजझम्पा ताल का परिचय

6.4 तालों को लयकारियों में लिपिबद्ध करना

6.4.1 आडाचारताल की लयकारियां

6.4.2 गजझम्पा ताल की लयकारियां

6.5 सारांश

6.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

6.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

6.9 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0वी0(एन0)–202 प्रथम खण्ड की सप्तम् इकाई है।

इस इकाई में आप संगीत में प्रयुक्त होने वाली पाठ्यक्रम की तालों का परिचय प्राप्त करेंगे। इस इकाई में तालों के विभिन्न ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारियों में लिखना भी समझाया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप ताल की संरचना एवं स्वरूप को समझ सकेंगे जिससे आप इनका उपयोग संगीत में ख्याल गायकी रूप में भली–भांति कर पाएंगे। आप तालों को भातखण्डेताललिपि पद्धति के अनुसार विभिन्न लयकारियों में लिखना भी सीख सकेंगे।

6.2 उददेश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

- तालों की संरचना एवं स्वरूप को समझ पाएंगे।
- तालों के भिन्न–भिन्न उपयोग भी समझ सकेंगे।
- तालों के विभिन्न ठेकों को जान पाएंगे।
- तालों को विभिन्न लयकारीयों में लिखना सीख सकेंगे।

6.3 पाठ्क्रम की तालों का परिचय

6.3.1 आडाचारताल का परिचय – आडाचारताल चौदह मात्रा की तबले पर बजने वाली ताल है जिसका प्रयोग विलम्बित एवं मध्य लय में किया जाता है। एकताल की भांति अति विलम्बित लय में इसका प्रयोग नही होता है। इसमें गायन एवं वाद्यो पर मुख्य रूप से मध्यलय की रचना ही गाई व बजाई जाती है । चारताल पखावज पर बजाने वाली बारह मात्रा की ताल है परन्तु आडाचारताल का पखावज पर बजने वाली ताल से कोई सम्बन्ध नही है यद्यपि नाम से सम्बन्ध का भ्रम होता है। इसमें एकल वादन भी तबला वादकों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इसका स्वरूप मध्य लय में ही स्थापित होता है। द्रुत एवं अति द्रुत लय में प्रायः इस ताल का प्रयोग नही किया जाता है। चौदह मात्रा की ही तबले पर बजने वाली झूमरा ताल, दीपचन्दी ताल, एवं कैद फरोदस्त ताल है जिनका स्वरूप एवं ताल संरचना आडाचारताल एवं एक दूसरे से भिन्न है एवं इन तालों का संगीत में प्रयोग भी भिन्न रूप में होता है। यही समान मात्रा की तबले पर बजने वाली भिन्न तालों का औचित्य भी है। झूमरा ताल का प्रयोग विलम्बित स्थान की रचना के लिए ही किया जाता है एवं इसका प्रयोग मध्य एवं द्रुत लय हेतु नही किया जाता है। दीपचन्दी ताल मध्यलय में भी प्रयोग की जाती है जो बृज की होली एवं चैती गायन के साथ बजाई जाती है। दीपचन्दी ताल को चॉचंर भी कहा जाता है। कैद फरोदस्त ताल मध्य लय में गायन एवं वादन की रचनाओं हेतु प्रयोग की जाती है।

आडाचार ताल की संरचना निम्न प्रकार है :–
मात्रा – चौदह, विभाग – सात (2+2+2+2+2+2+2) प्रत्येक विभाग दो मात्रा का है। पहली मात्रा पर सम चार, सात,एवं ग्यारह पर ताली पांच आठ एवं तेरह मात्रा पर खाली है।

<u>ठेका–</u>

धिं	तिरकिट	धिं	ना	तू	ना	क	त्ता	तिरकिट	धि	ना	धि	धि	ना
X		2		0		3		0		4		0	

6.3.2 गजझम्पा ताल का परिचय – यह पखावज पर बनने वाली पन्द्रह मात्रा की ताल है। यह ताल सामान्य प्रचलन में नहीं है। इसमें ध्रुपद शैली में गायन एवं वादन प्रस्तुत किया जाता है। इसमें विभागों की मात्राओं के विषय में मतभेद है। एक मत के अनुसार पहले तीन विभाग चार–चार मात्रा के है एवं अन्तिम विभाग तीन मात्रा का है। इसमें कुल चार विभाग है। इसके अनुसार ताल संरचना एवं स्वरूप निम्न प्रकार से है :–

मात्रा – पन्द्रह, विभाग चार (4+4+4+3)

ठेका–

धा दीं नक तक	धा दीं नक तक	दीं नक तक तिट	कत गदी गिन
X	2	0	3

पहली मात्रा पर सम, पांचवी एवं तेरहवी मात्रा पर ताली एवं नौवी मात्रा पर खाली है।

अन्य मत के अनुसार पन्द्रह मात्रा को चार ही विभागो में बांटा गया है परन्तु तीसरा विभाग तीन मात्रा एवं अन्तिम चौथा विभाग चार मात्रा का है। इसके अनुसार ताल संरचना एवं स्वरूप निम्न है।

धा दीं नक तक	धा दीं नक तक	दीं नक तक	तिट कत गदी गिन
X	2	0	3

ठेके के बोल के अनुसार दूसरा मत ही अधिक तर्क संगत लगता है।

6.4.1 आडाचारताल में लयकारियां :–

आडाचारताल–

मात्रा – 14, विभाग – 7, ताली – 1, 3, 7 व 11 पर खाली –5, 8 व 13 पर

आडाचारताल का ठेका :–

धिं तिरकिट	धिं ना	तू ना	क ता	तिरकिट धि	ना धि	धि ना	धिं
×	2	0	3	0	4	0	×

दुगुन, तिगुन एवं चौगुन की लयकारी को क्रमशः दो बार, तीन बार एवं चार बार प्रयोग किया जाता है।

आडाचारताल की दुगुन :–

धिंतिरकिट धिंना	तूना कता	तिरकिटधि नधि	धिना धिंतिरकिट
×	2	0	3

धिंना	तूना	कता	तिरकिटधि	नधि	धिना	धिं
0		4		0		×

आडाचारताल की तिगुन :–

धिंतिरकिटधिं	नातूना	कतातिरकिट	धिंनाधिं	धिंनाधिं	तिरकिटधिंना	तूनाक	तातिरकिटधिं
×		2		0		3	
नाधिंधिं	नाधिंतिरकिट	धिंनातू	नाकता	तिरकिटधिंना	धिंधिंना	धिं	
0		4		0		×	

आडाचारताल की चौगुन :–

धिंतिरकिटधिंना	तूनाकता	तिरकिटधिंनाधिं	धिनाधिंतिरकिट	धिंनातूना	कतातिरकिटधि
×		2		0	
नाधिधिना	धिंतिरकिटधिंना	तूनाकता	तिरकिटधिंनाधिं	धिनाधिंतिरकिट	धिंनातूना
3		0		4	
कतातिरकिटधि	नाधिधिना	धिं			
0		×			

6.4.2 गजझम्पा ताल में लयकारियां :–

गजझम्पा ताल :–

मात्रा–15, विभाग–4, ताली – 1, 5 व 13 पर खाली – 9 पर

गजझम्पा ताल का ठेका :–

धा दीं नक तक ।	धा दीं नक तक ।	दीं नक तक तिट ।	कत गदी गिन ।
×	2	0	3

गजझम्पा ताल की दुगुन :–

धादीं	न्कतक	धादीं	नकतक	दींनक	तकतिट	कतगदी	गिनधा	
×				2				
दींनक	तकधा	दींनक	तकदीं	नकतक	तिटकत	गदीगिन	धा	
0				3			×	

गजझम्पा ताल की तिगुन :–

धादींनक ×	तकधादीं	नकतकदीं	नकतकतिट	कतगदीगिन
धादींनक 2	तकधादीं	नकतकदीं	नकतकतिट	कतगदिगन
धादींनक 3	तकधादीं	नकतकदीं	नकतकदीं	कतगदीगिन
धा ×				

गजझम्पा ताल की चौगुन :–

धादींनकतक ×	धादींनकतक	दींनकतकतिट	कतगदिगनधा
दींनकतकधा 2	दींनकतकदीं	नकतकतिटकत	गदिगनधादीं
नकतकधादीं 0	नकतकदींनक	तकतिटकतगदि	गनधादींनक
तकधादींनक 3	तकदींनकतक	तिटकतगदिगन	

अभ्यास प्रश्न

क) निम्न के उत्तर सत्य अथवा असत्य में दीजिए :–

1. आडाचारताल में 07 विभाग होते हैं।
2. आडाचारताल तबले पर बजाने वाली ताल है।
3. गजझम्पा ताल में चौथी मात्रा पर खाली है।
4. गजझम्पा ताल का वादन पखावज वाद्य पर किया जाता है।

6.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप पाठ्यक्रम की तालों को जान चुके होंगे। आप प्रत्येक ताल की ताल संरचना को भी समझ चुके होंगे। संगीत में विभिन्न गायन शैलियों के साथ निश्चित तालों का प्रयोग किया जाता है, अतः इसी आधार पर विभिन्न तालों की रचना की गई। समान मात्राओं की विभिन्न तालों का आधार भी यही है। इस इकाई में प्रत्येक ताल के संगीत में प्रयोग के विषय में

आपने अध्ययन किया, अतः इस अध्ययन के पश्चात आप संगीत में तालों का प्रयोग भली–भांति कर पाएंगे। आप इन तालों के विभिन्न स्वरुपों को भी जान चुके होंगे।

6.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क) निम्न के उत्तर सत्य अथवा असत्य में दीजिए :–

1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. सत्य 5. असत्य

6.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीवास्तव, श्री गिरीश, ताल परिचय भाग –3, रूबी प्रकाशन मलाका, इलाहाबाद।
2. मिश्र, श्री विजय शंकर, तबला पुराण, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
3. वसन्त, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।

6.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. सेन, डॉ0 अरूण कुमार, भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
2. शर्मा, श्री भगवतशरण, ताल प्रकाश, संगीत कार्यालय हाथरस।

6.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम की किन्हीं दो तालों का पूर्ण परिचय दीजिए एवं उनकी दुगुन, तिगुन व चौगुन लयकारी भी लिपिबद्ध कीजिए।